शीष-ज्योत्स्ना

तेलुगू कविताओं का
नागरी लिप्यान्तरण

शीलेन्द्र शर्मा

'नीलम के पंख' नाम से

शेषेन्द्र शर्मा

शेष-ज्योत्सना

(तेलुगू कविताओं का नागरी लिप्यान्तरण)

'नीलम के पंख' नाम से उर्दू अनुवाद—

डॉ. ग़यास सिद्दीकी

प्रथम संस्करण १९७२
(तेलुगू का अनुवाद अंग्रेज़ी, उर्दू और हिन्दी में एक साथ
१९७२ में प्रकाशित)

मूल्य : ७.५० (सात रुपये पचास पैसे)

आवरण : श्री रमेश शर्मा

प्रकाशक :
इंडियन लैंग्वेज फोरम :
ज्ञानबाग़ पैलेस, गोशामहल, हैदराबाद-१२

नागरी लिप्यान्तरण : श्री ओमप्रकाश निर्मल

मुद्रक : कमर्शियल प्रिंटिंग प्रेस, बेगमबाज़ार, हैदराबाद

अनुक्रम

भावबोध तथा अभिव्यक्ति

शेष-ज्योत्स्ना क्षण-अनुक्षण की वाद-अनुवाद की कृति-अनुकृति की रचना है। ये कविताएँ वस्तुतः तेलुगू की हैं, जिसमें कवि का स्वर मुखर हो स्फुटित हुआ है। अंग्रेज़ी, उर्दू और हिन्दी मात्र परिवेश है। शेष ज्योत्स्ना वैयक्तिक अनुभवों के स्फार और अनुभावों की स्फीति से शीतल और शारद है। इसके भावबोध का क्षितिज नवीन कलात्मक रंगीनी से मोहक और आकर्षक हो उठा है। इसका सौन्दर्य-विधान, इसके रंग संकेत जहाँ चाक्षुष हैं वहाँ भास्वर भी हैं। कवि शेषेन्द्र का यह वह क्षितिज है, जहाँ लिप्त और निर्लिप्त, मोहक और गहरे रहस्य-मय जगत् में डूबता उतराता व्यक्तित्व अहं से निखर उठता है। डूबता है अपनी तन्मयता के कारण और उतराता है अपनी टूटती-जुड़ती आस्थाओं के कारण पर उनकी गरिमामय प्रतिष्ठा का स्वर यहाँ सर्वत्र जागृत रहता है। कवि आशावादी है। उनका एक-एक अवलोकन-बिन्दु एक-एक कविता का शीर्षक बन जाता है। यह शीर्षक अपनी नयी अर्थवत्ता को ले कर नये संदर्भों से अपने आपको जोड़ता है। यह दृगंचल छोर शेष की कविता का सबसे सुन्दर आयाम है। ऐसा लगता है कि कवि का स्वर शब्दों में आन्तरिक संगीत को बाँध लेने को विकल है और एक से एक आवेगजनित स्पन्दन एक से अधिक स्तरों पर अपने पटल को धर-पकड़ लेने के लिए आतुर है। गद्य का विवर्त यहीं शब्दों की अर्थवत्ता को गहरे घुमा लेता है और अपने धरातल पर उन्हें फिर ले आता है। कवि की यह शैली अपने आपमें नयी अभिव्यक्ति है, गहरी कलादृष्टि की सृजनशीलता है।

युग के सन्दर्भ, युग की नयी प्रवृत्तियों और नयी संभावनाओं से कवि पूर्णतया परिचित है; उसकी अभिव्यंजना भी अत्यन्त गरिमामयी शब्दावलियों में मिलती है : शेख़ मुजीबुर्रहमान के 'सोनार बांगला' पर कवि कहता है :—

ऐ नादान
सुन तो ज़रा
यक ऊंची मलकूती साफ़ सुथरी निदा

कोहे मकरा से
वक़्त की सर-सर की साँसों से
उम्मीदों के, ख़ूँ के लबादे पहने
मुल्कों की सरहद को
ठोकर से मिटाती आज़ादी निकली है
राह के पत्थर धोये
जशनों को कुचले
जज़बात को रौंदे
दरियाए मव्वाज की मानिन्द उभरी
आज़ादी की देवी अपने घर आयी है

जीवन में समय का अवकाश है, अवकाश में कई आयाम हैं जो नये-नये धरातल ले कर प्रस्तुत होते हैं। सुख-दुःख की भावपरिधि में आन्तरिक सत्य अपने आप समन्वित हो जाता है। यही अभिव्यक्ति-करण जीवन दृष्टि का दृश्यविधान है।

चलो ऐ जाने आरज़ू
तुफ़ानी बाढ़ में जस्त लगाएँ
और आने वाली
कल की जलती हुई सहरों पर
अपने लब रख दें
वक़्त की चरागाहों में
ख़ौफ़ और ग़ुस्से की नदियाँ जा गिरती हैं
जहाँ तुम और मैं
दो मासूम कलियाँ
जीवन हरियाली की ज़वानों पर चटकी हुई है
कासनी सहरों की निखत
बारूद की बू
एक याद को जगाती है

जीवन का यह क्षितिज वह अवलोकन-विन्दु है जहाँ से मानव और मानवीय चेतना के दर्शन होते हैं। यह चेतना जहाँ गतिशील है वहाँ सन्दर्भों में नियत और युग से सीमित बन कर भी रंगीन अवश्य है। यह रंगीनी जीवन के अन्तर्मूल्यों की है, जिसके रंग-संकेत बड़े स्पष्ट

और भास्वर हैं। इन चित्रों में चित्रात्मक अभिव्यक्ति सफल हुई है। शेषेन्द्र की एक अभिव्यक्ति प्रस्तुत है :—

जैसे इनसान
एक किनारे से दूसरे किनारे के दरमियान
करवटें बदलता है
जैसे दमकता सूरज
मशरिक़ और मग़रिब के दामन में
वक़्त की हमारंगी लहरों पर
अँधेरे उजाले के बीच
पहलू बदलता रहता है
वक़्त
यकसानियत के बरअक्स
रंग बदलता रहता है

नये प्रसंगों के दृश्य स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों में चित्रित हुए हैं :

इश्क अगर जीवन की मिठास है
तो आशिक एक फूल है
जिसे तुम्हारी अगुश्ते हिनावस्ता ने खिलाया है

अतीत वर्तमान में, वर्तमान भविष्य में उतर रहा है। व्यक्ति-चेतना सामाजिक-चेतना का आह्वान करती हुई कहती है :—

हमने क्या सरमाया छोड़ा है
बजुज़ अश्क—ओ-ख़ून-ओ-जंग
बजुज़ गम-ओ—जख्म-ओ-उसरत
बजुज ख्वाब दर ख्वाब दर ख्वाब
रियाकारी-ओ-बुज़दिली
नयी नस्ल
जो अहदे कोहन का सहारा होती है
माज़ी के खुश्क होंठों तक
सूरज के दरियाओं को खींच लाएगी

पेरिस की डिमेली-मूर्ति को देख कर कवि का हृदय उसकी आँखों को अपनी आँखों में ढाल कर अनुभव करता है :

कोहे सहरा से
वक़्त की सर-सर की साँसों से
उम्मीदों के, ख़ूँ के लबादे पहने
मुल्कों की सरहद को
ठोकर से मिटाती आज़ादी निकली है
राह के पत्थर धोये
जशनों को कुचले
जज़बात को रौंदे
दरियाए मव्वाज की मानिन्द उभरी
आज़ादी की देबी अपने घर आयी है

जीवन में समय का अवकाश है, अवकाश में कई आयाम हैं जो नये-नये धरातल ले कर प्रस्तुत होते हैं। सुख-दुःख की भावपरिधि में आन्तरिक सत्य अपने आप समन्वित हो जाता है। यही अभिव्यक्ति-करण जीवन दृष्टि का दृश्यविधान है।

चलो ऐ जाने आरज़ू
तुफानी बाढ़ में जस्त लगाएँ
और आने वाली
कल की जलती हुई सहरों पर
अपने लब रख दें
वफ़्त की चरागाहों में
खौफ़ और ग़ुस्से की नदियाँ जा गिरती हैं
जहाँ तुम और मैं
दो मासूम कलियाँ
जीवन हरियाली की ज़बानों पर चटकी हुई है
कासनी सहरों की निखत
बारूद की बू
एक याद को जगाती है

जीवन का यह क्षितिज वह अवलोकन-विन्दु है जहाँ से मानव और मानवीय चेतना के दर्शन होते हैं। यह चेतना जहाँ गतिशील है वहाँ सन्दर्भों में नियत और युग से सीमित वन कर भी रंगीन अवश्य है। यह रंगीनी जीवन के अन्तर्मूल्यों की है, जिसके रंग-संकेत बड़े स्पष्ट

और भास्वर हैं। इन चित्रों में चित्रात्मक अभिव्यक्ति सफल हुई है।

शेषेन्द्र की एक अभिव्यक्ति प्रस्तुत है :—

जैसे इनसान
एक किनारे से दूसरे किनारे के दरमियान
करवटें बदलता है
जैसे दमकता सूरज
मशरिक़ और मग़रिब के दामन में
वक़्त की हमारंगी लहरों पर
अँधेरे उजाले के बीच
पहलू बदलता रहता है
वक़्त
यकसानियत के बरअक्स
रंग बदलता रहता है

नये प्रसंगों के दृश्य स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों में चित्रित हुए हैं :

इश्क अगर जीवन की मिठास है
तो आशिक एक फूल है
जिसे तुम्हारी अगुश्ते हिनावस्ता ने खिलाया है

अतीत वर्तमान में, वर्तमान भविष्य में उतर रहा है। व्यक्ति-चेतना सामाजिक-चेतना का आह्वान करती हुई कहती है :—

हमने क्या सरमाया छोड़ा है
बजुज़ अश्क—ओ-खून-ओ-जंग
बजुज़ गम-ओ—जख्म-ओ-उसरत
बजुज ख्वाब दर ख्वाब दर ख्वाब
रियाकारी-ओ-बुज़दिली
नयी नस्ल
जो अहदे कोहन का सहारा होती है
माज़ी के खुश्क होंठों तक
सूरज के दरियाओं को खींच लाएगी

पेरिस की डिमेली-मूर्ति को देख कर कवि का हृदय उसकी आँखों को अपनी आँखों में ढाल कर अनुभव करता है :

वो आँखें

नील गगन के टूटे हुए दो टुकड़े
दो ऊदे-ऊदे परिन्दे
जैसे दो नीलम पंख लगा कर उड़ जाएँ
मैं इनमें कोहसारों पर गिरने वाली बर्फ़
और चाँदनी की ठडी महक पाता हूँ

....

किस बुत तराश ने
कितने प्रेमनगर
तुम्हारी आँखों में
तराश डाले हैं

....

जिन सत्यों के साथ कवि की आनुभूतिक सम्बद्धता होती है, उनके संस्कार भी तरल होते हैं और अभिव्यक्ति तरल से तरलतर हो उठी है :

देखो,
मैंने इस पाकीजा लम्हे को
खून-रिसते हुए मौसमों से छीना है
जो अब तक भी खून आलूदा है
मैंने गुरुबे-आफ़ताब के जख्मी सीने से
ये चीख छीन ली है
हक़ माँगा है

....

ज़िन्दगी तुझसे कहती है
कि जब तक अंगूर निचोड़े न जाएँ
शराब नहीं बनती
जब तक
गन्ने को शिकंजे में न कसा जाए
रस नहीं निकलता

कर्पूर गौर शेषेन्द्र का व्यक्तित्व और अस्तित्व वे दो बोल हैं जो

दो पंख बन कर अनन्त नील गगन में उड़ जाते हैं और उस 'क्षण' में केन्द्रित हो जाते हैं, जब वह जल में कमल बन कर फूल उठता है या स्थल में शबनम का मोती बन बिखर जाता है और उम्मीद की आरती बेला में अपना काफ़ूर जला कर महूर्त भर तो अपनी सुगंधि विकीर्ण कर लेना चाहता है। कितनी सुन्दर पंक्तियाँ हैं :

जब नैनों के कमल तुम पर खिले
तो नींद भँवरा बन कर उड़ गयी
आसाब की तनाबें बज उठीं
और दिल ताल पर धड़कने लगा
बदन में मौजे खूँ बल खाती नागिन की तरह
रक्सां रक्सां हैं
किसी वीरान मंदिर में
उम्मीद की आरती जलती है
दौड़ती छाती बसीत तारीकी के
उन आखरी लम्हों में
जीवन-ज्योति
मुश्ते अहसास में
आवाज़ें पा की सहर तक
जलना चाहती है

करुणा का अवतार वेदना के संभार से नमित हो उठा है। वेदना के मेघ सान्द्र और घनीभूत हो ऐसे उतर आये हैं कि बरसात भी रुक गयी है। कवि-हृदय के बोल इतना ही मोल कर सके कि

मुझे उम्मीद न थी
कि रूह कुसरवाना के साये
मेरी खामोश आँखों की झीलों में
बहने लगेंगे
रातें पहले भी थीं
लेकिन
उनमें कोई आहट

कोई सरगोशी नहीं थी

अवसाद के ये क्षण कितने मार्मिक हैं ? मार्मिक ही नहीं, मर्म को छू लेने वाले हैं। पर संसार क्या है ?

'वक़्त अगर दस्तक दे
तो अपनी आँखों के घूँघट खोलो

....

आँखों के ताल
जिनमें नीले साये मुतर्हरिक हैं बोल रहे हैं
जिन्हें मेरे हज़ारों कान सुन रहे हैं
यह रात नहीं, लम्हा है
जिसमें अनगिनत जवाहरात की फ़स्ल
काटी गयी है
मसर्रत, जैसे हाथी दाँत के फूल
उम्मीदें, जैसे नीलम
नाउम्मीदी, जैसे सियाह मोती
जश्न तखरीब, अंगारे
चरके खाये हुए बदन
भूल और याद
एक दूसरे से गले मिलते हैं
फिर इस लम्हाए बेशक़ीमत से
जीवन के लहू से
ज़िन्दगी का दूध निचोड़ते हैं

....

तुमने नारंगी शाम से मेरा परिचय करवाया
मैंने देखा
उसकी पेशानी पर रात की गहरी लकीरें थीं
ज़िन्दगी के नाक़ाबिले बरदाश्त दुख के मजे चखें
बड़े सौंधे थे
एक साँस में उम्मीद थी, दूसरी में दुःख था

बिलकुल उसी तरह
जैसे दिन के बाद रात आती है

संसार का सार क्या है ?

आबे रवाँ में
हम फूलों की दो कश्तियाँ हैं
शाखों पर दो चकोर हैं
मँडवे चढ़ती दो बेलें हैं

... ...

जीवन आखिर जीवन है
और तुम
अपने 'शेष' के लिए
सब कुछ हो, सब कुछ हो।

कर्पूर गौर, करुणावतार, संसार सार के साथ यदि पर्याय को स्वीकृत कर लें तो ये बाहें भुजगेन्द्र-हार के समान बाहुपाश में बद्धनिबद्ध युगनद्ध की शीतल ज्वाला का प्रतीक हैं, छाया भास है, सौन्दर्य है जिसकी प्रत्येक किरन-किरन को छूती है और आलोक विकीर्ण करती है।

तुम्हारी बाँहें
खेतों पर रक़्स करती हुई चाँदनी की मानिंद
मुलायम हैं
मुझ पर उन बाँहों में क्या गुज़री ?
तो सुनो
जैसे अव्वल-अव्वल
लपकती हुई अग्नि ने
ऋषियों को गीत दिये थे

शेष-ज्योत्स्ना, तिमिर मिहिर की धूपछाँह है। यह काव्य सौन्दर्य उसी का प्रस्तुतीकरण है। यदि लोम, अनुलोम और विलोम पर आस्था रखें तो इस संचयन में मिलेगा सत्य, शिव और सुन्दर।

भालचन्द्रराव तेलंग

तारुफ़

शेषेन्द्र शर्मा तेलुगू के असरी अदब में एक क़दावर शायर और एक साहबे नज़र नक़्क़ाद और स्कालर की हैसियत से क़ुबूले ख़ासो आम की सनद हासिल कर चुके हैं। ज्ञानपीठ अवार्ड पाने वाले तेलुगू के बुज़ुर्ग और मुहतरिम शायर विश्वनाथ सत्यनारायण ने उनके बारे में लिखा है : "उनकी शायरी का मयार बहुत ऊँचा है। तेलुगू अदब में आज बमुशकिल ऐसे दस शायर मिलेंगे जो उनकी शायराना मर्तबत तक पहुँच सकते हैं।"

सोवियत-नेहरू अवार्ड याफ़्ता तेलुगू के नामवर शायर श्रीश्री ने जिनकी शायराना मर्तबत को हिन्दुस्तान से बाहर के शेरी और अदबी दुनिया में भी माना जाता है, शेषेन्द्र शर्मा की नज़्मों की तारीफ़ करते हुए शर्मा की शायरी को फ्रांसीसी शराब से तावीर करते हुए लिखा है कि उनकी नज़्मों में ऐसी हैरत अंगेज़ लब्ज़ी तस्वीरें मिलती हैं जो अखलिए सुखन में कहीं नहीं दिखाई देतीं।

संस्कृत और तेलुगू के एक और नामवर शायर, स्कालर और नक़्क़ाद पुटपर्ती नारायणाचार्य ने उनकी शायरी की तारीफ़ करते हुए इस खयाल का इज़्हार किया है : "उनका तर्ज़े इज़हार बेहद पुरविक़ार और सहरअंगेज़ है। आज हमें शाज़ोनादिर ही ऐसे कामयाब और बाकमाल शायर मिलते हैं।"

शेषेन्द्र शर्मा एक जहीन, हस्सास और पढ़े-लिखे क़लमकार हैं। उन्होंने उलुमे मुत्तदाविला और आलमी अदवियात और फ़ुनूने लतीफ़ा का गहरा मुतालिया किया है और साल हा साल से उनका क़लम इल्मो-हिक़मत और शेरो-अदब के मुख्तलिफ़ शोबों में मुतहर्रिक है। उनकी नसरी और शेरी तख्लीक़ात के मुताद्दिद मजमुए शाया हो चुके हैं। तर्जुमे के फ़न पर भी उन्हें उबूर हासिल है। संस्कृत के शोहरए आफ़ाक़ शायर कालिदास की तवील और क्लासिकी नज़्म 'मेघदूत' के अलावा शाहनामए फ़िरदौसी के रुस्तमोसोहराब वाले हिस्से का भी उन्होंने बहुत खुश

असलूबी के साथ तेलुगू में मुन्तख़िल किया है। फ्रांस के मशहूर शायर चार्ल्स बोदिलेयर की मुताद्दिक़ नज़्मों का भी तेलुगू तर्जुमा किया है। उनकी शरीकेहयात राजकुमारी इन्दिरादेवी धनराजगीर ने जो खुद अंग्रेज़ी की एक शेवाबयान शायरा हैं उनकी एक तवील नज़्म 'ऋतुघोष'—मौसमों की पुकार—को वहुस्ने तमाम अंग्रेज़ी का लिबास पहनाया है।

शेषेन्द्र शर्मा कई ज़बानें जानते हैं। अंग्रेज़ी पर उन्हें पूरी क़ुदरत है और कभी-कभी अंग्रेज़ी में फ़िक्ररेसुख़न भी करते हैं। पिछले चन्द साल के अन्दर उन्होंने उर्दू में भी इतनी दस्तगाह पैदा कर ली है कि अब आसानी के साथ उर्दू शायरी से महज़ूज़ हो सकते हैं। उर्दूअदब की तारीख़ और उसकी रफ़तारे-तरक़्क़ी से भी वह नावाक़िफ़ नहीं हैं—लेकिन उर्दू दुनिया उनकी शायरी से कुछ ज़्यादा मुतार्रिफ़ नहीं है हालांकि उर्दू और तेलुगू के मेलजोल की दास्तान एक पुरानी दास्तान है ताहम यह बात हैरतअगेज़ है कि इस देरीना क़ुरबत के बावस्फ़ इन दोनों शाइस्ता ज़बानों में इल्मी और अदबी लेन देन की रिवायत बहुत कमज़ोर रही है। बिलाशुबहा यह एक शुगूने नेक है कि हिन्दुस्तान की अदबी और तहज़ीबी ज़िन्दगी का नया कारवाँ इस गफ़लत की तलाफ़ी के सामान बहम पहुँचा रहा है और आज हिन्दुस्तान की सभी ज़बानों के बाशऊर अहले क़लम और अरबाबे फ़िक्रोनज़र यह महसूस करने लगे हैं कि इस अज़ीम मुल्क की तारीख़ व तहज़ीब उस वक़्त तक तश्नादहन और तेही-दामन रहेगी जब तक कि यहाँ की सब ज़बानें और तहज़ीबी वहदतें बाहमी लेन देन को अपना नसब्बुलऐन न बनाएँ और ख़ुशी की बात है कि इस सिम्त में कई नतीजाखेज़ क़दम उठाये जा चुके हैं।

शेषेन्द्र शर्मा की नज़्मों का ज़ेरेनज़र मजमुआ 'नीलम के पंख' भी इसी सिलसिले की एक अहम कड़ी है। इस मजमुए में शर्मा की २० नज़्में...अंग्रेज़ी, उर्दू और हिन्दी तर्जुमों के साथ पेश की जा रही हैं। अंग्रेज़ी तर्जुमा इन्दिरादेवी धनराजगीर के ज़ोरे क़लम का मज़हर है और इसी अंग्रेज़ी तर्जुमे के तवस्सो से डाक्टर ग़यास सिद्दीकी ने इन नज़्मों को उर्दू में मुन्तख़िल किया है। तर्जुमा और फिर शेर का तर्जुमा, वह भी दो वास्तों से, दर्जए अव्वल की तख़लीक़ी सलाहियत, शायराना बसीरत और ज़बान-व-बयान पर भरपूर क़ुदरत चाहता है और पूरे इत्मीनान

के साथ यह बात कही जा सकती है कि डाक्टर ग़यास सिद्दीकी ने शे'शायरी के इस कारेनाज़ुक को, ताब्रामक़दूर बडी खूबी और सलीक़े से अंजाम दिया है। 'नीलम के पंख' का मुतालिया, हमारे ज़हन में पहला अहसास यह पैदा करता है कि शेषेन्द्र शर्मा की शायरी हुस्न, खैर और सदाक़त की शायरी है, ज़िन्दगी की उन बर्गज़िदा क़दरों ने उनकी शायरी के उफ़क़ में बड़ी उसत पैदा कर दी है। ज़मां वो मकाँ की बेकराँ पहनाइयों को शर्मा ने कुछ इस अन्दाज़ से अपने अशआर में समेट लिया है कि उनकी शायरी गोया, एक जामेजहाँनुमा बन गयी है। उनके अशआर की जमालियाती मसर्रत आफ़रीनी और उनके अंदाज़े-बयान की सहरकारी, ऐसी खुसूसियात हैं जो हर क़दम पर खारी के दामने दिल को अपनी तरफ़ खींचती हैं। 'नीलम के पंख' की नज़्में पढ़ कर ऐसा महसूस होता है कि ज़िन्दगी के गुनागूँ इमकानात की राहों में दूर-दूर तक रौशनी फैल गयी है।

शर्मा ने अपनी शायरी में फ़न की क़दीम रिवायतों का भी पूरा-पूरा पास-ओ-लिहाज रखा है और ज़िन्दगी के असरी तक़ाज़ों का दामन भी हाथ से नहीं छोड़ा है—गोया उनकी शायरी एक ऐसा आईनाखाना है जिसमें माज़ी की फिरदौसे गुमशुदा के जलवे भी दिखाई देते हैं और हाल की लम्हा-ब-लम्हा मुतग़ैयर होती हुई परछाइयाँ भी नज़र आती हैं—जो शक्लें बदल-बदल कर मुस्तक़बिल के ख्वाबों में तबदील होती जाती हैं। रिवायत के लहू ने उनकी शायरी को आबोरंग दिया है तो माशरे के फ़रसूदा और ज़िद्दी नज़रियों से बग़ावत की आँच ने इसमें हरारत वो तवानाई पैदा कर दी है। ज़िन्दगी से उनका कोई झगड़ा नहीं है, ताहम ज़िंदगी को ज्यों का त्यों क़ुबूल कर लेने पर भी बहरहाल वह राज़ी नहीं हैं। हर बालिग़ नज़र शायर की तरह वह ज़िन्दगी के तर्जुमान भी हैं और एक नयी जिंदगी के खालिक़ भी। उनके गहरे तारीखी शऊर और हक़ीक़त के शायराना इदराक ने उनकी आवाज़ में विक़ार और उनके लहजे में एतबार पैदा कर दिया है। उनके तखलीक़ी इज़हार की क़ुव्वत बेपनाह है। जिसका सर चश्मा उनका वह अन्दरूनी वजूद है जो ग़ालिब के अल्फ़ाज में बजाय खुद एक महशरे खयाल है। इनके दिल पर खून की गुलाबी ने फ़ितरतेखारिजी के सारे रंग, सारे मज़ाहिर अपने अन्दर समो लिये हैं। उनका शायराना इदराक हर ज़र्रे में छिपे हुए गुलिस्ताँ

और हर क़तरे में पोशीदा समन्दर के भेद को पा लेता है और फिर फ़ितरत के उन असरार को वो अपने फ़न का हिस्सा बना कर पैकर तराशी और महाकात निगारी के हसीन मुरक़्क़े पेश करते हैं :

वो आँखें
गगन के टूटे हुए दो टुकड़े
दो ऊदे-ऊदे परिन्दे
जैसे दो नीलम पंख लगा कर उड़ जाएँ
मैं इनमें कोहसारों पर गिरने वाली बर्फ़
और चाँदनी की ठंडी महक पाता हूँ
...
तुम एक हसीन हादिसे की जान हो
जो मेरी हज़ारों रगों में
एक आँख बन कर जाग रही है
मैं कि जिसे
हादिसए ज़िन्दगी ने रीज़ों में बाँट दिया था
एक अजनबी लमहे में
तुमने उनको एकजा कर दिया
और मेरी ज़िन्दगी पर
सुकून की शबनम बरसा दी

शर्मा का अहसासे जमाल...हुस्न का एक आफ़ाक़ी तसव्वुर बन कर जगह-जगह उनकी नज़्मों में बिखर जाता है :

दयारे रोम में तुमको देखा
क़दीम संगरेजों की अज़मत में
नक़्शो-निगार के आईनों में
अपने पहले महल की चौखट पर
दरख़्तों की शाख़ों के पीछे
दूर पहाड़ों के अक़ब में
सायों की तरह
माज़ी के नक़्शे-नाख़ून की मानिन्द
तुम एक संज़िल शाम की सूरत

सँवर कर आयी हो
और अपने संग
लम्हए ग़ुरेजां के ग़ुलाबों को चुरा कर लायी हो
(तुम)

लम्हए गुरेजाँ के गुलाबों की आरज़ू शायर के ज़हन में अनफ़ूस-वो आफ़ाक़ की बेकरानी पैदा कर देती है और उसके शऊरेनाशाद को भी शऊरे शादमाँ का जर्रीकश बना देता है :

हंगामे शब
ख़ामोशी की मकड़ी
नाउम्मीदी के जाले बुन रही है
बस एक आँसू
गोशए-चश्म में लरजाँ है
यह ग़म का सफ़ीर
तन्हा-तन्हा
शाने खुसरवाना से ख़िरामा है…

तेलुगू का यह जमाल परस्त शायर, चाहे वह हुस्नोमुहब्बत के रंग बिखेरे या कर्वेहयात के ज़ख्म सजाए या वक़्त के गुरेज़पा लम्हों को पकड़ने की कोशिश में ख़ुद आवलापा हो जाए। हर हाल में, अपने लहजे की नरमगी और अपनी आवाज़ के धीमेपन को बाक़ी रखता है। शर्मा के तर्ज़ेअदा की यही ख़ूबी और सलीक़ामंदी है जिसने उनकी शायरी में तासीर का जादू जगा दिया है। शर्मा की हिसीयत जितनी तेज़ है उसके इज़हार की कैफ़ियत उतनी ही लतीफ़ है जिसकी बदौलत उनकी शायरी का शोला, शबनमपोश बन गया है। शर्मा की नज़्मों को पढ़ कर ऐसा महसूस होता है कि शायर के ज़हनी सफ़र में हम भी बराबर के शरीक हैं। उसके ख़्वाब हमारे ख़्वाब हैं, उसके दिल की धड़कनें हमारे दिल की धड़कनें हैं, उसकी तमन्नाए निशात हमारी तमन्नाए निशात है और उसका क़र्ब महरूमी हमारा क़र्ब महरूमी है। शायर और ख़ारी के सारे दरमियानी फ़ासले टूट जाते हैं और दोनों में यग़ानगत का एक गहरा हिस्सी रिश्ता क़ायम हो जाता है और बिला शुबहा हर अच्छी और बड़ी शायरी का एजाज़ यही होता है कि वह अपने बाशऊर ख़ारी को भी अपना हमदम ओ हमनवा बना लेती है।

शर्मा ने अपनी शायरी में जिन आदर्शों, जिन ख्वाबों और जिन तमन्नाओं को पिरोया है उसके सिरे अज़ल-ओ-अबद से मिल जाते हैं और यही वह मुकामेइर्फ़ान है जहाँ पहुँच कर शायर का वजूदी तजुर्बा एक कुल्ली तजुर्बे की शक्ल अख्तियार कर लेता है और फ़न में आफ़ाक़ियत साँस लेने लगती है।

शर्मा का शायराना विज़दान जहाँ-जहाँ, ज़िन्दगी और इनसान के सुनहरे मुस्तक़बिल की बशारत देता है, उनके अशआर में एक पैगम्बराना कैफीयत पैदा हो जाती है :—

ऐ जाने बहार
हम नये आदम को धूम-धड़क्के से
लौटता देखेंगे
सुनो,
तारीख़ के ग़ारों में
उसकी आवाज़ गूँजती है
यह आवाज़ एक दिन
तमाम खोटे सिक्कों और झूठे इनसानों को
सलीब पर चढ़ा देगी (नये साहिल)

उनकी नज़्म 'इनसान', में भी हम ऐसी ही फ़ैसलाकुन आवाज़ सुनते हैं :—

कितने चीखते तूफ़ानों
कितने खामोश साहिलों
कितने दहकते सूरजों को छू कर
सहर
इनसानियत के दिल से तुलू हो रही है

और उनकी मारकतुलआरा नज़्म "नस्लें" उनकी शायराना सदाक़त की बेबाक़ तर्जुमान बन कर यह सदा देती है कि—नयी नस्ल जिसके लिए हमने सिर्फ़ आँसू, जख्म, खून, उसरत, रियाकारी और बुज़दिली का सरमाया छोड़ा है :—

माज़ी के खुश्क होंठों तक
सूरज के दरियाओं को खींच लाएगी

शेषेन्द्र शर्मा की शायरी, जहनों को तक़सीम करने वाले आहनी पर्दों को चीरती हुई उन सरहदों तक पहुँच गयी है जहाँ :—

इनसानियत का सूरज
ज़हन के ऐवानों में मोअल्लक़ है
गोया शोलों का ख़ोशा
बर्गेख़ुश्क की मानिन्द
बोलियाँ उड़ रही हैं
मुल्कों की सरहदें थर्रा रही हैं
तूफ़ानी हवाओं में इनसानियत की आँखें
नये हादिसों की मय पीने को खुली हुई हैं
(तूफ़ान)

हमें यक़ीन है कि उर्दू के असहावे जौक़ 'नीलम के पंख' के मुताले से ख़ुशवक़्त भी होंगे और नयी रौशनी भी पाएँगे।

अख़्तर हसन

मैं और मेरा मयूर

(मेरी पुस्तक के लिए मेरी ही भूमिका : A Dialogue across Time)

उस मकान में एक फुलवाड़ी—उस फुलवाड़ी में एक मोर—उस मोर में एक—नहीं नहीं, मेरे दिल में एक मकान—उस मकान में एक फुलवाड़ी—उस फुलवाड़ी में एक मोर—उस मोर में कोई एक...ख़ैर, बाद में बताऊँगा—वह मोर मैं जहाँ भी रहूँ, वहीं आ जाता है। अगर मैं लिखते हुए या पढ़ते हुए उसका ख़याल न करूँ तो वह अपनी चोंच से पायज़ामे को पकड़ कर खींचता है, मेरे पैरों की उँगलियों पर चोंच से धीरे से मारता है; मैं सिर उठा कर देखूँ तो वह भी सिर उठा कर मेरी आँखों में देखता रहता है। कुछ खाने के लिए कोक्कोको कहते हुए हठ करता है, जैसे कोई बालक अपनी माँ से लाड़ करता है। जवार या चावल के दाने नीचे ज़मीन पर डालें तो वह उन्हें चुगता नहीं, पीछे-पीछे चला जाता है। हाथ से खिलाएँ तो बड़ी ख़ुशी से खा लेता है। पेट भरने के बाद, वो मेरे पास से नहीं टलता, वहीं टहलता रहता है। बार-बार कोक्कोको करता हुआ अपने अस्तित्व का पता देता रहता है।

मेरे थक कर घर आते ही, वह रंगीन पर्व कहीं से मेरे पास आ जाता है, जैसे मेघ कानन में इन्द्र धनुष आया हो। बेचारा बोल नहीं पाता, अपने भावों को व्यक्त नहीं कर सकता। एक सागर गरजता रहता है, बाँध तोड़ कर बाहर उमड़ पड़ने के लिए, असफल हो व्याकुल हो जाता है। पता नहीं, वह प्राणी भीतर ही भीतर कितना व्यथित

हो रहा होगा, सिरजनहार से की विनती-मिन्नत कर रहा होगा अपनी लाचारी के लिए।

एक दिन मैं मर गया। मेरे कमरे में सभी रो रहे थे। वह देखो, मोर धीरे से सहमता हुए आ रहा है। मानवों के झुंड से भरे हुए उस कमरे में चारो तरफ़ देखते हुए प्राणों को हथेली पर रखे, आ रहा है। कितना ही प्राणभय क्यों न हो कोई बरबस उसे खीचे ला रहा है, वह मेरे पास आ रहा है। उसे क्या खीचे ला रहा है, मुझे मालूम है। (बहुत से लोगों को मालूम नहीं है। यही इस दुनिया की बदक़िस्मती है।) मृत्युभय भी उसे रोक नहीं पाया। मैं मर गया हूँ, पर इस तमाशे को देख ही रहा हूँ। कई लोग मेरी देह को घेरे-लपेटे रो रहे हैं।

अकस्मात गय्-द-मोपासा की कहानी 'प्रेम' मेरे मन में बिजली के समान कौंध गयी। उस कहानी में एक शिकारी पक्षियों के जोड़ में से मादा पक्षी को बन्दूक़ से मार गिराता है। वह ज़मीन पर गिर जाता है। वह अपने मित्र से कहता है: 'देखो, बन्दूक़ को निशाना बाँधे देख कर भी दूसरा पक्षी अवश्य ही बन्दूक़ का निशाना बन जाएगा।' (ऐसे पक्षियों में एक को मार गिराने का मतलब दोनों को मार गिराने के समान है।) उसके वचनों के अनुसार ही, आकाश में मँडराता हुआ, ज़मीन पर ख़ून से लथपथ पड़ी हुई मादा के पास नर पक्षी आ ही जाता है। भय को भूल कर वह बन्दूक़ के दायरे में आ गया। वह तो शिकारी था ही आते ही, शिकारी ने बन्दूक़ दाग़ दी। नर पक्षी आकाश से टूट गिरा, मादा पक्षी के पास ही।

झट से मुझे सुनाई पड़ा, कठोरता से शाप देने वाला एक पुराना स्वर। मुझे मालूम है, वह वाल्मीकि का है। वह स्वर मोपासा के शिकारी को कोस रहा है। वाल्मीकि निक्कर और बूट पहने हुए है। सिर पर सन-हैट है। मुख पर गहरी पीडा की रेखाएँ छायी हुई हैं। पास में मित्र के हाथ की बन्दूक़ धुआँ उगल रही है। मैं अपनी मृत्यु की बात भूल कर भौंचक्का रह गया। उसी स्वर ने पहले एक शिकारी को कोसा था। वह अब किसी दूसरे को गालीं दे रहा है। सभी कालों के, सभी शिकारियों को, यह स्वर ऐसे ही कोसता रहेगा? मानवता पर घाव करने वालों, द्वेष और स्वार्थ को रक्त के अक्षरों में लिखने

वालों, तथा ज़माने की राहों पर छापा मारने वाले बटमारों और डाकुओं से मानवता की रक्षा करने के लिए आठों याम पहरा देने वाला पुलीस है क्या यह स्वर ? विश्व में महनीयता शब्द का रूप धारण करती है। वह शब्द शाश्वत रूप से समस्त संसार में गूँजता रहता है, एक युग से दूसरे युग तक, एक देश से दूसरे देश तक, एक भाषा से दूसरी भाषा तक, अनन्त रूप से, और निरन्तर ही गूँजता रहता है।

२१ वीं शताब्दी के एक दिन शाम को मैं और अल्बर्ट काम् किसी पार्क के स्वीमिंग पूल में तैर रहे थे। उस रक्त में सने हुए हम दोनों एक ही बार उदित दो अरुण बिम्बों के समान थे। मैंने कहा, 'काम् ! तुमने कहा था, हिंसा-द्वेष से किसी महाकाव्य का आविर्भाव नहीं होता। फिर यह रक्त का सागर क्या है जिसमें हम तैर रहे हैं ? मानव पर प्रेम के कारण ही तो यह रक्त प्रवाहित हुआ ? यदि यह रक्त प्रवाहित न होता तो वे छोटे बालक इस प्रकार से उन फूलों में खेलते न होते, उदय और अस्त सभी के लिए इस प्रकार की रंगीनियाँ नहीं बिखेरते।' काम् के जवाब देने से पहले ही किनारे पर की कुसुमलता के पास बैठे काफ़्का ने कहा, 'यह रक्त प्रवाह तो आवश्यक है। उसमें तो कुछ नौकाओं में बैठे कीर्ति शिखर की ओर यात्रा कर रहे हैं। उनका लक्ष्य तो कीर्ति शिखर ही है किन्तु यह रक्त किनका है, किनके लिए प्रवाहित हुआ है, उनका कल्याण तो नहीं है। वे अपने रक्त की एक बूँद भी नहीं देते। कहते हैं पराये लोगों का रक्त प्रवाहित हो तो गीत लिखेंगे।'

भवभूति के साथ प्लेटो किसी चित्र को निहार रहे थे। भवभूति ने कहा, 'यह हनुमान का चित्र है जो थाईलैण्ड में बना है।' प्लेटो ने कहा, 'यह तो कालसमुद्र को पार कर आने वाला मानवता का सन्देश है।' इतने में काफ़्का ने बातें सुन कर कहा, "फ्रांज, इन नौका यात्राओं में समुद्री डाकू तो सदा रहते ही हैं। हमारे गुरुजी को इन्होंने ही हलाहल पिलाया है। उनके मरने के बाद, उनके धर्म के ये ही लोग गुरु बन बैठे। चित्त-शुद्धि से रहित लोग किस जमाने में नहीं हैं ? ऐसे लोगों में से ही एक व्यक्ति ने पिछले वर्ष सिस्टीन चापेल की प्रियेता मातृमूर्ति की नाक और हाथ काट डाले हैं। हलाहल पीने से पहले हमारे गुरु ने जो बातें कही थीं, वे आज भी मेरे कानों में गूँज रही हैं :

'हे न्यायाधिकारियो ! आप प्रसन्न रहिए ।......मुझे स्पष्ट मालूम हो रहा है कि मेरे जाने का समय निकट आ गया है। अब तो मेरा मर जाना ही अच्छा है। इस पीडा से विमुक्त हो जाऊँगा।...मुझ पर जिन लोगों ने आरोप लगाये हैं, या मुझे जिन लोगों ने दंड दिया है, उन पर मुझे लेशमात्र भी क्रोध नहीं है। बेचारे, उन्होंने मेरे प्रति कोई अपकार नहीं किया है, शायद उपकार करने की भावना भी नहीं रही है। उसके लिए उन्हें फटकार सुनाऊँगा तो सही पर कोमल भाव से।

'किन्तु उनसे एक प्रार्थना कर रहा हूँ कि वे मेरा एक उपकार करें। जब मेरे पुत्र बड़े होंगे, उन्हें भी इसी प्रकार दंडित करें। जैसे मैंने आप लोगों को सताया था, उसी प्रकार उन्हें भी सताइए। वे संस्कार की अपेक्षा सम्पत्ति को अधिक महत्त्व दें, या कुछ न हो कर भी बहुत कुछ होने का ढोंग रचाएँ तो उनकी आलोचना कीजिए, जैसे आज मैं आपकी आलोचना कर रहा हूँ। उनके अस्तव्यस्त मूल्यों के मिथ्या स्वरूप का खंडन कीजिए। अगर सचमुच आप यह काम करें तो मुझे और मेरे बच्चों को न्याय की भिक्षा प्रदान करेंगे।' हमारे गुरु ने जो पिया था, वह हलाहल नहीं, चित्त-शुद्धि की कसौटी थी।"

एकाग्रता के साथ इन बातों को सुनने वाले इक़बाल ने कहा :

'समय से पहले जन्म ले कर...समय की वेदी पर बलि हो गया,

कि ख़ूने सद हज़ार अंजुम से
होती है सहर पैदा'

५०० वर्षों के बाद वे ही ईसा के नाम से पैदा हुए। ईसा के रूप में जन्म लेने के १०० वर्ष पहले ही महाकवि वर्जिल के मन में बिजली की मानिंद चमक गया। उस महाकवि ने अपने (iv) इक्लोग्स में कहा है, 'उस दिव्य ज्ञान-गीत में चरम अंक अब आएगा : महा शकों की परम्परा फिर से जन्म लेगी। वह कन्या फिर से आएगी...अब एक नयी जाति सुवर्लोक से भुवर्लोक में अवतरित होगी। हे निर्मल देवता ! लूसीना ! इस नवजात शिशु पर अपनी करुणामय मुसकान छिड़क दे। इस शिशु के समय में लौह जाति (बर्बरता) का नाश होगा, सुवर्ण

जाति का उदय होगा। वह समस्त संसार में व्याप्त होगा।' इसीलिए उन्हें ईसा से पहले ही जन्म लेने वाला ईसाई कहते हैं।

एक दिन टेलीविज़न में मेकडयार्मिड का मुख—वह अपना 'थर्ड हिम टु लेलिन' गा रहा था।

'मैकेल राबर्टस, अन्य अनेक देवदूत, ओडेन, स्पेंडर,...इनमें किसी में भी कार्लायिल में जितना साहस है, जितनी नीति है, उसका दसवाँ भी नहीं है। उन प्रवंचकों जैसा न हो कर, मैं श्रमिक वर्ग का हूँ। मैं उनमें से नहीं हूं जो यह डींग हाँकते हैं कि हम श्रमिक वर्ग की प्रगति के लिए श्रम कर रहे हैं। मैं स्वयं श्रमिक ही हूँ...।'

मैंने कहा, 'बहुत ठीक कहा है भाई! बहुत ठीक कहा है। एक छोटे से प्रसंग का उल्लेख करूँगा। 'हाल में १९ वीं शती की फ्रेंच कविता' नामक मेरी एक पुस्तक पुस्तकों की अल्मारी से ग़ायब हो गयी। चिन्तित हो रहा था कि कोई चोर-चुड़ैल बिना बोले उठा ले गया। किन्तु एक दिन वह पुस्तक दिखाई पड़ी, एक आधुनिक (कु) कवि की वचन कविता में।'

'कौन है वह? आपका तेलुगू भाषी ही है?' बेचारे मेकडयार्मिड ने पूछा।

रात को एक सपना पड़ा, टेक्निकलर। अन्तरंग के मल्टीडैमेन्शन परदे पर दृश्य। ज्याँ कोक्तो और मैं बैठे-बैठे अफ़ीम पी रहे थे। कोक्तो ने कहा, 'वृक्ष जाति के पदार्थों में एक अफ़ीम ही ऐसी वस्तु है जो हमें वृक्षस्थिति को प्राप्त कराती है। उसके कारण ही हमें वृक्ष समूह में स्थित अव्यक्त वेग का परिचय प्राप्त होता है। वृक्ष तो साधारणतया निश्चल ही लगते हैं। किन्तु उनमें जो वेग है, उसका हमारी असमर्थ इन्द्रियाँ अनुमान भी नहीं लगा सकती हैं।' पास ही बैठे पिकासो ने कहा, 'अफ़ीम में जो गन्ध है, वह अन्य पदार्थों में कम है। उस गन्ध की तुलना सर्कस की गन्ध से या बंदरगाह की गन्ध से कर सकते हैं।' कोक्तो ने कहा, 'कह नहीं सकते कि वह गन्ध कितना इन्द्रजाल फैलाती है। चारों दिशाओं से मक्खियाँ आ कर घेर लेते हैं। उनके मन में स्वप्न छा जाते हैं। छिपकलियाँ दीवारों से

सट कर मूर्च्छित हो जाती है। रात्रि के आगमन की प्रतीक्षा करती रहती हैं।'

मैंने कहा, 'अफ़ीम को तो आप हमारे महाखंड से ले गये थे। किन्तु उसका मर्म जितना आपको मालूम है उतना हमें नहीं।' कोक्तो ने कहा 'युवा एशिया अब अफ़ीम का इस्तेमाल नहीं करता क्योंकि उसके दादा ने इस्तेमाल नहीं किया था। बदक़िस्मती की बात यह है कि युवा एशिया युवा यूरोप का अनुकरण कर रहा है। इसलिए अफ़ीम हमारे द्वारा ही अपने जन्मस्थान पहुँचेगी।'

इस प्रकार बातचीत चल रही थी और मेरा मन कर्पूर पराग के समान हवा में लीन हो रहा था, पूछा, 'ऐसा क्यों हो रहा है।'

कोक्तो ने कहा, 'जानने का प्रयत्न मत करो। उसकी मृदुलांगुलियों के उपलालन के वशीभूत हो जाओ। एक बार कवि जाग गया तो वह केवल मूर्ख हो जाता है। अर्थात् मेधावी बन जाता है। मूर्च्छित हो होश में आने वाली औरत के समान पूछने लग जाता है कि मैं कहाँ हूँ। जागे हुए कवि की रचनाएँ पढ़ना व्यर्थ है।'

मैंने कहा, 'फिर सपनों में ऊभचूभ रहने वाले कवि की रचनाएँ किसकी समझ में आएँगी ?'

'राजनीतिवादी को छोड़ कर, अन्य कवियों को अपनी भाषा को समझने वाले पाठकों की संख्या पर आधारित रहना चाहिए। अपनी भाषा के स्वर को पहचान सकने वाले, अपनी भाषा की अन्तरात्मा को पकड़ सकने वाले ही अपने पाठक हैं। अधिक सख्या में पाठकों को चाहना कवि का लक्षण नहीं है।'

इलियट ने उनका साथ दिया, 'मैं तुम्हारे साथ सहमत हूँ। राजनीति से सम्बन्ध कविता को तत्काल प्रसिद्ध बनाएगा। लेकिन कल भी (आगे भी) वह कविता पढ़ी जाए तो उसका मतलब यह नहीं कि उसका सम्बन्ध राजनीति से है। सचमुच कविता हो तो बिना उस सम्बन्ध के भी पढ़ी जाती है। क्योंकि राजनीति नामक पदार्थ भी

मानवीकृत हो कर, कविता के रूप में परिवर्तित न किया जाए तो वह पढ़ कर भूल जाने योग्य ही सिद्ध होगा।'

'ठीक है इलियट, तुम इडियट हुए बिना कविता नहीं कर सकते। अफ़ीम का सेवन करने के बाद तुम आपे में नहीं रहते हो। अपने बाहुओं में अपने सिर को छिपा लो। कंधे से कान को जोड़ दो। अब देखो, भूकंप, विप्लव, कारखानों का जल उठना, सेनाओं में भगदड़ मच जाना, महाप्रवाहों का कूद पड़ना—आदि-आदि कई चित्रों को तुम्हारे शरीरान्तर्गत प्रदेशों में, नक्षत्रों से भरपूर रात्रियों में, तुम्हारा कान देख सकेगा।'

तब तक मुझमें काल और दूरी की सीमाएँ विलीन हो गयी थीं। शब्द और समुदाय अपने-अपने संगीत के साथ उमड़ पड़ रहे थे। उन अव्यक्त मानसिक समुद्र-तरंगों में अपनी 'मच्चू-पिच्चू' शीर्षक कविता को ले कर पाब्लो नेरूडा उदित हुआ। चिल्लाया 'उठ जाग मेरे जन्म के साथ एक बार फिर जाग।' और एक बार तरंगों को पैरों से रौंदते हुए उसने आक्रोश किया, 'तुमने यहाँ जिस ग़ुलाम को दफ़नाया था, उसे दे दो मुझे। दलित प्राणियों की रोटी को इस जमीन से खींच लेने दो मुझे।'

अफ़ीम का धुआँ कमरे में चारों तरफ़ फैल गया। दीवारों पर की छिपकलियाँ मक्खियाँ, मच्छर सपनों की लहरों में तैरते जा रहे थे। हल्के पीले रंग के सपने छा रहे थे। और वर्ण जातियों के कंठ स्वर सुनाई पड़ रहे थे। इषिकावाटाकुबोकु अपने गम्भीर जापानी कंठ से यों गा रहा था : 'मैं दुखी हूं, कमज़ोर हूँ। किन्तु मेरे हाथ में एक अद्वितीय भयंकर खड्ग है। अगर मैं युद्ध न करूँ तो उसे सहन नहीं कर पाऊँगा। परन्तु मैं जीत नहीं पा रहा हूँ। अर्थात् अब मरण ही मेरी शरण है। किन्तु मुझे मौत से बड़ी घिन है। मैं मरना नहीं चाहता। फिर जीवित कैसे रहूँ?'

जो प्रेम मानवता का रूपान्तर है, चित्तशुद्धि नीति और साहस का दूसरा नाम है जो प्रेम दो परस्पर अनजान व्यक्तियों को विलीन कर, सृष्टि की अनन्तता का आविष्कार करता है, जो प्रेम सर्वमानव जाति को एक ही प्रकार के इतिहास के साँचे में ढाल कर मानवताहिरण्य

बना देता है, जिस प्रेम के कारण मानव साथी मानव की पीड़ा से द्रवीभूत होता है. जिस प्रेम के कारण मानव अन्याय-अत्याचार का सामना करता है, जिस प्रेम के कारण मानव न्याय का निरोध करने वाली शक्तियों को अपने पवित्र कर्कश परशु का शिकार बना देता है, घायल मानवता को रक्त से तपण छोड़ता है, युग-युगों के दंड के परिणामस्वरूप प्राप्त कर, रक्त कणों में निक्षिप्त उस संपत्ति को ठुकरा देने वाले लोग ही आज कवि बने हुए हैं। उसे (उस प्रेम) को सेंटिमेंट कह कर घृणा प्रदर्शित करने वाले आज कविता के नियामक बने हुए हैं। ऐसे आज के दिनों में जब कि मानव के रक्त और स्वेद को मुकुट बना कर मस्तकों पर अलंकृत कर रहे हैं छल, चौर्य, द्वेष, ईर्ष्या, अज्ञान आदि कविता के नाम से हैजे की तरह फैल रहे हैं, कविता का नाम ले कर व्यापार करने वाले बेवक़ूफ़ों को जब सम्मानित किया जा रहा हो, उन सम्मान-सत्कारों की तैयारी करने वाले पडितों और उस व्यापार के फलते-फूलते हुए आज के निगोड़े समय में—

आकाश को चूमने वाले शिखर, विमलरवन की विहार भूमियाँ बने आकाश, फूलों की भाषाओं में बोलने वाले पवन, किरातों पर ज्वलित रंगों को थूक देने वाले फूल, मानवता से आँख-मिचौनी खेलने वाले रंग, कान्ति और कमनीयता को हर एक मानव में बराबर बाँट देने के लिए आक्रोश करने वाली मानवता—ये सब जिसके मन में ज्योत्स्ना-पर्व रच रहे हों, उसका मर जाना ही अच्छा है। मर जाएँ तो इन नीचों के तमाशे को देखते रह सकते हैं। मुझे और क्या चाहिए। मेरी कविता को फूल और पक्षी गा रहे हैं, पवन और आकाश दूरतीरों को ढो लेजा रहे हैं, पर्वत और अरण्य उन गीतों से गूँज रहे हैं, नदी और समुद्र उद्घोष कर रहे हैं, संध्याएँ प्रतिबिम्बित कर रही हैं, ध्वनि और जन जीवनाड़ियों में सम्मिलित हो रहे हैं। इसलिए अब तो काग़ज़ और क़लम को छोड़ दे रहा हूँ।

जो मर गया हो, उसे वे सभी चीज़ें दिखाई पड़ती हैं जो जीवित व्यक्ति को दिखाई नहीं पड़तीं। शब्द दिखाई पड़ते हैं, शतियाँ दिखाई पड़ती हैं, सुनाई पड़ने वाले संगीत दिखाई पड़ते हैं। दिखाई पड़ने वाले रंग सुनाई पड़ते हैं। यदि आँखों का काम कान, कानों का काम आँखें, पैरों का काम हाथ, हाथों का काम पैर, इस प्रकार शरीर के अंग एक

दूसरे का काम करें तभी जीवन में मृत्यु के सार को पहचान सकते हैं। जीवन के पार को मृत्यु में भलीभाँति पहचान सकते हैं। अब मैं जिस स्पृहणीय दशा का अनुभव कर रहा हूं, वह यही है।

ज्याँ कोक्तो इसी दशा को अफ़ीम के सेवन से प्राप्त कर लेना चाहता है। वह कहता है: 'पाँच घूंट ले लें तो बस है, मन का भाव उलट-पुलट हो जाता है। एक काले तैराक के समान ह्रस्वरूप को धारण कर चांनियों की स्याही के समान उत्कृष्ट वांछाओं को छेड़ते हुए देह सरोवर के जल में धीरे-धीरे व्याप्त हो जाता है।' 'अफ़ीम अमूर्त वस्तुओं को मूर्त बनाता है। कल्पना को पदार्थ में रूपान्तरित कर परिणाम को सिद्ध करता है। मन को भी जो दिखाई नहीं पड़ते हैं, दृश्यमान करता है। हमें भूतों का रूप दे कर अदृश्य हो घूमने वाले भूतों को भी डराता है। उस अफ़ीम का सेवन करने के बाद दिमाग़ नहीं, देह सोचने लग जाती है। देह सपने देखने लगती है। वह मृदुल हो जाती है शकल हो जाती है, उड़ने लग जाती है। उड़-उड़ कर अपने आप को आकाश से पक्षी के समान देख लेती है।'

अप्रैल का महीना आया। बग़ीचे में वन-ज्वाला (forest flame) अगारे उगल रही थी। तभी आये श्रीश्री का पत्र पढ़ रहा था। नौकर कॉफ़ी लाया। मुझे और मेरे पास बैठे 'रेम्बो' को उसने कॉफ़ी दी एक घूंट पी कर मैंने पूछा, 'क्या पाउडर मिल्क डाला है?'

'जी हाँ, दस बजने से पहले हैदराबाद में भैंस जागती ही नहीं।' मुसकुराते हुए उसने जवाब दिया।

रेम्बो ने हँसते हुए पूछा: 'श्रीश्री ने क्या लिखा है?'

एक पंक्ति पढ़ कर सुनाई। 'आपकी कविता में लगता है कि आप पारसमणि को खोजने वाले अन्वेषी हैं......।'

'आपके श्रीश्री को आल्केमी आती है क्या?' रेम्बो ने पूछा।

'पता नहीं...।'

'मैंने बेल्जियम, स्कांडिनेविया, इटली, साइप्रस, अबसीनिया आदि कई देश छान मारे हैं आल्केमी...उसी स्वर्णविद्या के लिए।'

'अच्छा, शायद इसीलिए वेमन्ना के पद्यों के कुछ शब्दों के समान

आपकी कविता के कुछ शब्द और भाव समझ में नहीं आते।'

'किस पद्य के बारे में कह रहे हैं ?...' 'एनफान्स' ही आपके मन में है ?' उन्होंने पूछा।

'जी हाँ, और सॉनेट-द-वोयल्स में भी ऐसे कुछ शब्द और भाव हैं जो समझ में नहीं आते।'

'वह तन्त्रों से सम्बद्ध है। प्रत्येक रंग का अपना एक शब्द है। प्रत्येक शब्द का अपना एक विशिष्ट रंग होता है।'

'सच ?'

'हाँ, मुझे तो ऐसा ही दीखता है और सुनाई पड़ता है।' रेम्बो ने गम्भीरता से कहा।

कॉफ़ी पीते-पीते मैं एकदम अप्रतिभ हो गया। एक मिनट भर चुप रह कर, पूछा 'वेमन्ना से भेंट करें ?'

'वह तो सचमुच मेरी मन-पसन्द बात है। उनका आश्रम है कहाँ ?'

'क्या बताऊँ, कहाँ हैं ? वह एक विचित्र मन है। सभी वृक्ष और अरण्य, सभी गाँव उनके आश्रम ही हैं।'

'फिर किस ओर चलें हम ?'

'बस, ऐसे चलते जाएँ। अगर आप तैयार हैं, तो इस साहस यात्रा के लिए निकल पड़ें।'

यात्रा पर निकलने के लिए दोनों सहमत हुए कॉफ़ी पी ली और विशाल विश्व में प्रविष्ट हुए। गाँव, जंगल, खेत, नदी, नगर पार करते हुए चले, चलते ही गये। अन्त में एक गाँव में, एक सड़क पर, एक पेड़ के नीचे, एक पैर फैला कर, एक पैर समेट कर, उस समेटे हुए पैर पर ठुड्डी टेक कर, नज़रें ज़मीन पर गाड़ कर बैठा हुआ एक आदमी, दूर से ही दिखाई पड़ा। रेम्बो को बताया कि ये ही वेमन्ना हैं। उनके पास गये। उनके शरीर पर लंगोट के सिवा कुछ नहीं था। वे बस वैसे ही बैठे हुए थे। न हिले, न डुले। हमारी तरफ़ देखा भी नहीं। उनके

मुँह पर एक मुसकान पल भर के लिए चमक गयी । झाड़ की डंडी से ज़मीन पर लिखते रहे । कोई जवाब नहीं दिया । तिनका फेंक दिया और जो लिखा था, उस पर से हाथ हटा दिया । ज़मीन पर जो लिखा गया था, उसे हमने पढ़ा : 'हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्' । रेम्ब्रो आश्चर्य चकित रह गये । 'हम जो पूछना चाहते थे, उसे आप पहले ही कैसे समझ गये ?'

'तुम्हारी कल्पना भूत, भविष्य वर्तमान में अवस्थित है । यह सोचना कि मैंने अभी कल्पना की है, ग़लत है । कल्पना अमूर्त है । अमूर्त वस्तु भी कुछ लोगों को दिखाई पड़ती है ।' बिना सोचे समझे मैं ये बातें कह गया । ऐसा लगा, मानों कोई मेरे शरीर का उपयोग कर रहा हो, मेरी ज़बान से बोल रहा हो ।

हम पीछे लौट कर आ गये । 'मुझे जो चाहिए, वह सुवर्ण नहीं है । उससे भी अधिक शक्ति, फूलों की भाषाएँ, नक्षत्रों के गीत सुनने की शक्ति, चाहिए । सन्ध्याकाश से साथ बातें करनी चाहिए । नील-गगन के तल खौलते हुए समुद्र में दिल की गहराइयों को देख सकना चाहिए । शताब्दियों के हृदय को चीर, पार जाने वाले मानवता वेग को, त्रिकालों में देखना चाहिए । शब्द देखने चाहिए, रंगों को सुनना चाहिए । देश काल से अतीत अनन्त को भ्रूमध्य रेखा में धारण करना चाहिए ।' मैंने कहा ।

'हाँ, ठीक कहा । मैं भी उसी को खोज रहा हूँ । फिर से चलें... अब वह वहाँ रहेगा... मिलेगा कि नहीं ।'

सूर्य का उदय हुआ । काल और दूर के जाल बुन कर जगजन पर फेंक रहा है । फिर से वही फुलवाड़ी—वनज्वाला—कॉफ़ी—रेम्ब्रो—आज शेषेन अन्तर्मुख है । चितवनें तो वनज्वाला के खिले फूलों पर दौड़ लगा रही हैं । 'यह कैसी चुप्पी है ?' रेम्बो ने पूछा । बस, शेषेन किसी यूनान आरेकिल के समान बोलने लगा, 'जो कवि है, उसे दृष्टा होना ही चाहिए । कैसे होगा ? सब तरह के पाप करने चाहिए, सब प्रकार के विष पीने चाहिए इन्द्रियों को अस्त-व्यस्त करना चाहिए । अपने प्रति इतनी हिंसा करने के लिए कितना आत्म-बल चाहिए ? तब

वह भयंकर अपराधी बनेगा, किरात होगा. ऋषि होगा। क्यों ? वह अव्यक्त को प्राप्त हुआ है। साधारण मानव जब सुखाभिलाषी हो कर जहाँ के तहाँ रह जाते हैं, यह पीडारूपी अग्नियों में कूद कर, तप्त कुन्दन बन बाहर आया है। मुझे सुवर्ण की प्राप्ति सन्तुष्ट नहीं करती, मुझे स्वयं सुवर्ण बन जाना चाहिए।' (रेम्बो मुझ पर आविष्ट हो गया।)

वनज्वाला की लता से एक फूल गिर पड़ा। उसमें से राजा भोज उतर आए। हमने उनका अभ्युत्थान किया और आसन पर बिठाया। उन्होंने कहा, फूल पर बठा जा रहा था, आपकी बातचीत सुन कर यहाँ आया। सुना वाल्मीकि ने प्रारम्भ में अनेक पाप किये, कष्ट उठाए, किरात हुआ। अव्यक्त को व्यक्त कर लिया। अपने अनुभव से एक अप्राप्त बिन्दु को प्राप्त किया। वहाँ वे किरात (व्याध) भी हैं, किरात को शाप देने वाले भी हैं। वे स्वयं शिकारी हैं और शिकार भी।

इत्थं विलप्य विपिने दयितां विचिन्वन्
रामो न तत्र धृतिमान् न हि लक्ष्मणश्च
तादृग्विधामपि कथां कथयन् स्ववाचा
वल्मीक जन्ममुनिरेव कठोर चेताः ॥

रेम्बो अब और अधिक विचारमग्न हो गया और कहा, 'महाकवि बोदेलेर प्रथम दृष्टा हैं, राजाओं के राजा, सच्चे भगवान् हैं।' मैंने कहा, 'रेम्बो, उधर देखो, वह सूर्योदय। वही सूर्यास्त होता है। इन किनारों से दूसरे किनारों को, ये त्रिसन्ध्याएँ, इन्द्रियों का इन्द्रजाल। इस इन्द्रजाल के चंगुल से बच पाने वाले के लिए वाल्मीकि ही बोदेलेर हैं, बोदेलेर ही वाल्मीकि हैं। दृष्टा एक ही है जो त्रिकालाबाध्य है।'

मैं उठा। रेम्बो के कंधे पर सहारे के लिए हाथ डाल कर आगे बढ़ा। कोई भार मुझे दबाए जा रहा था। मेरा कुरता पसीने से तर हो गया। कंधे पर शाल खिसक गया। वैसे ही जा रहा था, वन-ज्वाला की ओर। रेम्बो की समझ में कुछ न आया, वह भौंचक्का हो रह गया। पीछे से झुंड के झुंड आ रहे थे, भवभूति, कोक्तो, लियोनार्डो, मैकेलेंजिलो, बोदेलेर, मलार्मे, कालिदास, इलियट, पाउंड, जार्ज

सांटायाना, भास, ग़ालिब, जक्कन, सौदा, मीर, श्रीनाथ, लोर्का,

इक़बाल, रोडें रिल्के, वर्जिल पिकासो सोक्रटीज़ (सुकरात) कावबाटा, ज़ीसस, (ईसा) कवफ़ी, सेफरीस—लहराते हुए, पाँति बाँध कर, रेखाओं के समान, मानों प्रकाश घिर रहा हो, वे झुंड के झुंड बाँध कर आ रहे थे।

मैं वनज्वाला की ओर बढ़ता जा रहा था, जा रहा था, जा रहा था। वनज्वाला ने मुझे रोका नहीं। मैं उसमें चला गया। उसने मुझे अपने में लीन कर लिया। अब मैं नहीं हूँ। वनज्वाला ही है। मेरे पीछे आने वाले वे झुंड, सिरों की पक्तियाँ मेरे पीछे ही वनज्वाला की ओर धीरे-धीरे आ कर, एक-एक फूल में विलीन हो गये। बची थी लाल-लाल फलों से भरा वनज्वाला। हमेशा के जैसा अप्रैल का महीना—हज़ारों-लाखों फूल गला खोल कर काकलीस्वर में गा रहे थे।

'आइए, हमारे दरवाज़े के वन्दनवार बन जाइए,
मानव जीवन को महापर्व बनाइए'

'कहते हो, मुट्ठी भर वसन्त की भीख सब को दे दो,
कहते हो, मुझे तो प्रेम करने वाले दो होंठ बस हैं।'

'जाओ
कल के गुलाब की फुलवाड़ियों में
उषा बन जाओ
उषा बन जाओ।'

—शेषेन्द्र शर्मा

नोट : इसमें कवि, लेखक, चित्रकारों के संवाद उनके ग्रन्थों में से लिये गये हैं।

हिन्दी अनुवाद : डा. भीमसेन 'निर्मल'

सफ़ीने रवाँ दवाँ

[शेख मुजीबुर्रहमान की नज़्म, २५ जनवरी १९७२ को आल इण्डिया रेडियो, नयी दिल्ली के नेशनल सिम्पोज़ियम में पढ़ी गयी।]

सूरज चमका
जैसे लहू के दरिया में
आकाश से टूटा और गिरा
बम बरसे
फिर मौसम के और जीवन के
रंगीं चेहरों पर ख़ाक उड़ी
नन्हें परिन्दों के सीने से
मीठे सुरों की चोरी करके
शब भागी
आग करोड़ों आँखों से
बस उबल पड़ी
एक भयानक चीख़
जैसे निकल पड़ी
सोती सदियाँ जाग उठीं
और वक़्त की सरहद टूटी
फिर आवाज़ों का सरगम
रक़्स-कुना और अक़्स-फ़िगन
साँसों के सुर्ख़ समन्दर में
ऐसा टूटा
जैसे इक शिरियान कटे और ख़ून बहे
फिर सारे जग को ले डूबे

यह सब कुछ क्या था ?
धरती के फट पड़ने का

एक धमाका था
या कोई पैदा हुआ था
जागा था
झूले में फाँद पड़ा था
ताकि साँस मिले
सूरज को देख सके
अपने पंखों से
उड़ता फिरे
अफ़लाक की सैर करे
ऐ प्यारी ज़मीन
ऐ प्यारे वतन
मसरुख़ा मीठे गीतों को
अब ढूँढ़ निकालो
जहाँ-जहाँ नफ़रत के नशेमन डाले थे
वहाँ-वहाँ तुम प्रेम के दीप जलाओ
आबोहवा को साफ़ करो
मानव से आकाश तलक
उल्फ़त के नग़में गाओ
बेचारी यह प्यासी धरती
क़त्ल के साग़र पी कर
ज़ख़्म निगल कर
हाथ उठाये
शेरों का मुँह बंद करे
गर्म जवानी के ख़ूँ से
माँ-बहनों के माथों से
कुंकुम छीने

धुएँ के बादल में बहने को
याक़ूती चेहरों के पारे

हीरों की यादों के पंख लगा कर उड़ जाओ
आकाश के तारों में मिल जाओ
और हमेशा चमको

क्या नस्ले-इनसानी पर
पाबन्दी हो सकती है ?
क्या शेरों जैसे समन्दरों के
पाँव में बेड़ी डाली जा सकती है ?
क्या नबज़ों को रोका जा सकता है ?
क्या सेहरा में आँधी को क़ैद किया जा सकता है
ऐ नादान !
सुन तो ज़रा
यक ऊँची मलकूती साफ़ सुथरी निदा
कोहो सहरा से
वक़्त की सरसर की साँसों से
उम्मीदों के, ख़ूँ के लवादे पहने
मुल्कों की सरहद को
ठोकर से मिटाती आज़ादी निकली है
राह के पत्थर धोये
जशनों को कुचले
ज़ज़बात को रौंदे
दरियाए मव्वाज की मानिन्द उभरी
आज़ादी की देवी अपने घर आयी है
अपनी वादी में ठहरी है
अपनी दुःख-भरी अबरू
कोहसारों पर
ससताने को रख दी है

सहर की एक किरन

आहिस्ता से आ कर
आज़ादी के माथे से
खून के धब्बे पोंछेगी
कल तक तो यह सूरज
एक फोड़ा था
आज, यह याकूती हाथों से
हीरे-मोती छिड़के
कल तक था
जख़्मी खेतों में शैतानी खेल
आज ज़मरुद जैसा ताज़ा सब्ज़ा है
नक़्शेक़दम शहीदों के
जैसे ख़ुशी से रक्स करे
जंगल में मोर
गंगा के किनारे खेलने वाले बच्चे
ब्रह्मपुत्र के साहिल पर
कश्ती डाले
आज़ादी के पानी में
बहते रहते हैं
और वक़्त के धारे बदलते हैं
हिमालय की चोटी पर मुसकानें हैं
नयी मुहब्बत की नस्लों को
चीख़ों को और गूँजों को
अपने क़रीब बुलाती हैं
अपने ज़ानों पर
सुलाती हैं
ऐ सुबह की मासूमी

एक ताज़ा और नया सूरज
सोने के पानी से तुझको नहलाता है
अज़ीम क़िस्मत का एक अहदे-ज़र्रीं,
हसीन धरती
तुझको अता करता है

ये आँखें

[शादी के दिन १६ जून १९७१ हालेबीड़ में यह नज़्म अंग्रेज़ी में अपनी धर्मपत्नी राजकुमारी इन्दिरा देवी धनराजगीर जी के लिए कही गयी।]

शायद एक दूसरे में
हम पिन्हाँ-पिन्हाँ थे
हुजूमे ज़िन्दगी से परे
सचाई की तलाश है
इन आँखों के दोआबे में
जो दरअसल सोने और सियाह नीलम के खज़ाने हैं
मैं देख सकता हूँ उस रूह को
जो हिमालय की चोटी की मानिंद खड़ी है
और जो सितारों को छूती है
जिसमें मेरा मोअत्तर-माज़ी बसा हुआ है
शहनाई पिछली ज़िन्दगी के कोहसारों और वादियों में
गूँज उठी है
और राग हिंडोल
परियों की तरह
महताब की किरन-किरन से
मेरे जीवन के सेहरा में उतर रहा है
जहाँ सहर बेआवाज़ है
अप्सराएँ ज़रीन मलबूस में
अपनी ज़ुल्फ़ों को छुपाये
एक मुकम्मिल दुनिया-ए-ख़्वाहिशात में

ख़िरामा है
जहाँ होंठों की मुसकुराहट
चम्पई चेहरों पर चमकती है
बाग़ों में, महलों में
जहाँ क़नीज़ें मौसमों के गीत गाती हैं
जहाँ हिरनी की आँखें मुसकुराती है
और मोर नाचता है

उन शहरों में विंध्य से परे
परबतों, खेतों और क़िलों में
जो राजस्थान की रेगे सेहरा में
मोतियों की तरह बिखरे हैं
उन तसवीरों को मैंने
अपने बुज़ुर्गों की किताबों में
एक आँख बन कर
हर बुने मूँ से पढ़ा था
जो एक तन्हा बच्चे की तरह
ख़ामोश
सीढ़ियों पर बैठा
पिछली ज़िन्दगियों को तलाश करता हो
तहतुश्शऊर में मैंने एक हुस्न खोया था
जिसे अब पा गया हूँ
नयी सुबह के उफ़क़ पर
मेरे नाआफ़रीदा बच्चों के ख़ालिक़
इन दो आँखों में
मुसुकुराते नज़र आते हैं

नये साहिल

[नये साल पर]

खला
अमीख़ से अमीख़तर होती जाती है
मुझे गिरिफ़्त में ले लेती है
गरजता हुआ पयाम
मेरे कानों में रस घोलता है
क्या तुम अभी इसी यक़ीन पर क़ायम हो
कि यह दिन रसूलों के और सलीबों के हैं
यह दिन
ज़िन्दगी को सलीब की मानिन्द तराशते हैं
और आदम को इबने-मरियम की सूरत में ढालते हैं
नये अहद का सूरज उभर कर
लब वा करता है
एक नये अहदनामे का तौहफ़ा लाता है
यह मौत और हक़ीकतपसन्दी की मुक़द्दस किताब है

इनसान
आकाशलोक के वासियों की मानिन्द
आज़ाद-ओ-बेज़ंजीर है
एक ज़माने की जुरअत है
एक नयी क़ुव्वत बन कर
एक नयी राह पर
क़दम से क़दम मिला रहा है

ज़मीन के इस किनारे से उस किनारे तक
इस साहिल से उस साहिल तक
नहीं, बल्कि उफ़क़ों की रहगुज़ार में
एक नया पयम्बर
साबेक़ा पयम्बर के मुक़ाबिल आएगा
उस गरुड़ की तरह
जो नग़मए–नाशनीदा
अपने गले में रोके हुए हो
इनसानी फहम के किनारों से परे
वह सलीब पर नयी चाँदनी
और सुनहरी रोशनी का तूफ़ान
लाएगा
चलो ऐ जानेआरज़ू
तूफ़ानी बाढ़ में जस्त लगाएँ
और आने वाली
कल की जलती हुई सहरों पर
अपने लब रख दें
वक़्त की चरागाहों में
ख़ौफ़ और ग़ुस्से की नदियाँ जा गिरती हैं
जहाँ तुम और मैं
दो मासूम कलियाँ
जीवन-हरियाली की ज़बानों पर चटकी हुई है
कासनी सहरों की निखत
बारूद की बू
एक याद को जगाती है
जंग की हवस और जज़्बात ज़िन्दा हो जाते हैं
तारीख़ नज़रियों की धूल के साथ गुज़रती है
नारों की आवाज़ गूँजती है

उसी तरह
जैसे दूर के कोहसारों पर उफ़क़ के क़रीब धुआँ
आसमान की पेशानी पर
लकीरें बन जाता है
और ग़ुबार
झुकते हुए आसमानों में
ग़ैर मुतवक़्क़ा सहरों के ऐवानों से
गुज़र जाता है
और इस अहद के गुज़र जाने के बाद
धोखे का शिकार हो जाते हैं
गीत गाते हुए
और बेबुनियाद दलील के गुलदस्ते उछालते हुए
ऐ वक़्त के नौखेज़ बच्चे
ऐ दूध के समन्दर
ऐ चाँद
तमाम ज़िद्दी नज़रियों के पैराहन
तार-तार कर डालो
और ख़ूबसूरती के मसनुई मलबूस को तर्क कर दो
जो मसीह की मानिन्द
एक शफ़्फ़ाफ़ नूर
नाज़ुक उँगलियों को
बेआवाज़ अबद के आसमानों में उछालता है
हरियाली और गूँजों को छूता है
मोरों से खेलता है
एक सादा गीत की तरह
यह ख्वाहिश है कि तूफ़ानी समन्दरों की ललकार में
घुल जाएँ

ज़हन के शाहीन
जिन्हें दूर ख़्वाब के दरीचों में से देखा था
जिनकी परवाज़ को
नीली रौशनी में आँका था
जिनका गीत सिर्फ़ आँसू है
उन मीनारों से टपकता है
जिनमें ममता की आँखें जल रही हैं
जलज़ला फुंकारता है और डसता है
जज़्बात के ख़स-ओ-ख़ाशाक की तरह
लावा उबलता है
और इनसान को ढकेलते हुए
ज़िन्दगी के दूसरे किनारे तक
फेंक देता है
जैसे इनसान
एक किनारे से दूसरे किनारे के दरमियान
करवटें बदलता है
जैसे दमकता सूरज
मशरिख़ और मग़रिब के दामन में
वक़्त की हमारंगी लहरों पर
अँधेरे-उजाले के बीच
पहलू बदलता रहता है
वक़्त
यकसानियत के बरअक्स
रंग बदलता रहता है
जो अक़ीदतों को झुठलाता है
ऐ आदम सुन
बहकती हुई नयी नस्ल के नुक़ूशे क़दम को
कलीसा के दरवाज़ों पर

नयी नस्ल का बोझ

मन्दिरों की दीवारों पर कई उँगलियों के निशान
मूर्तियों और देवताओं के क़रीब
दिलों के ज़ख्मों से ख़ून रिस रहा है
इनसान कफ़े-अफ़सोस मल रहा है
अरज़े मुबहम और मायूसी के ज़र्द सायों में
घिरा हुआ है
मगर उस वर्क़ के पलटने से पहले
ऐ जाने बहार
हम नये आदम को धूम-धड़क्के से
लौटता देखेंगे
सुनो
तारीख़ के ग़ारों में
उसकी आवाज़ गूँजती है
यह आवाज़ एक दिन
तमाम खोटे सिक्कों को और झूठे इनसानों को
सलीब पर चढ़ा देगी

तुम

[पेरिस में वीनस डिमेलो की मूर्ति को देख कर]

कुछ तो बोलो
मेरे दयारे चश्म में एक ख़्वाब
धनक की तरह बिखर गया है
वो धनक
जो दूर आकाश के किनारों से
उतरती मालूम होती है
उन होंठों को वा करो
जो रुहक़शे बर्गेगुल हैं

ऐ परीवश
मेरे मासूम माज़ी की लहरों में
वक़्त की क्यारियों में
गहरी नींद में
कितने युग तुम सोती रही हो
गुलाब खिले-मुर्झाए
खिज़ा की नज्र हुए
लेकिन तुम
तुम्हारे नाज़ुक चरणों में नज़र होने वाले
गुलाबों को लेने के लिए
क्यों नहीं आयीं

दयार रोम में तुमको देखा

क़दीम संगरीज़ों की अज़मत में
नक़्श-ओ निगार के आईनों में
अपने पहले महल की चौखट पर
दरख़्तों की शाख़ों के पीछे
दूर पहाड़ियों के अक़ब में
सायों की तरह
माज़ी के नक़्शे-नाख़ून की मानिन्द
तुम एक सजोल शाम की तरह सँवर कर आयी हो
और अपने संग
लमहाये गुरेंजा के गुलाबों को
चुरा कर लायी हो

ऐ रोम के गुरूब होने वाले आफ़ताब
मेरी आँखों में जर्द तमन्नाओं को तुमने
परत-परत उतार दिया है
जैसे किसी माइकल एंजलो के क़लम से
धनक के ग़म-अंगेज़ दर्द
टपक गये हो

वो आँखें
नीलगगन के टूटे हुए दो टुकड़े
दो ऊदे-ऊदे परिन्दे
जैसे दो नीलम
पंख लगा कर उड़ जाएँ
मैं उनमें कोहसारों पर गिरने वाली बर्फ़
और चाँदनी की ठंडी महक पाता हूँ
जहाँ मग़रिब के किनारों में रेत पर
इन्सानी फ़िक्र की बरसात होती है

मैं उनमें
सल्तनतों और शहरों के
उरूज-ओ-ज़वाल देखता हूँ
जो सदियों के ताक़तवर शानों पर
सो गयी थीं

जब तुमको पाया
तो दुनिया को खो बैठा
नींद की मीठी झील में
एक नाज़ुक ख़्वाब
हंस की तरह बहने लगा है
दूर, बहुत दूर
मैं आसमानों के नीले सन्नाटों में खो गया था
और फिर जागा
उफ़क़ की बाँहों में
जज़बात के बगूले की तरह
मेरे तख़य्युल को तुमने
नये पंख दिये हैं
क़ुव्वते परवाज़ दी है
आख़िर कुछ तो बोलो
इससे पहले कि ये लम्हये शब
गुज़र जाए
ये रात
जिसमें गुलहाये-आह-कशीदा की साँसें
हम क़दम हैं
कहो तुम कितनी रातें
नुखरवी चाँदनी की मौजों में
नहा चुकी हो, कहो

बादे सबा की कितनी जुल्फ़ें
तुम्हारे मरमरी शानों को चूमते हुए
उफ़ख़ में गुम हो गयीं
क्या मैं तुम्हारे
संदली बदन पर
अपने होंठों के जलते हुए नूक़ूश
छोड़ सकता हूँ
बस यह रात गुज़र जाने से पहले
दिल का बोझ हलका कर डालो

किस बुत तराश ने
कितने प्रेमनगर
तुम्हारी आँखों में
तराश डाले हैं
कहो क्या उन आँखों से
तुम देख रही थीं
सागरों का, शहरों का नशेबो-फ़राज़
जागते, डूबते सूरज के रंगीन पंखों पर
वक़्त का पंछी
मुसकुराता हुआ उड़ता रहा
उस वक़्त तुम सूरते सहर रौशन थीं
और गुले यासमीन की तरह महकती थीं
कितने मुसाफ़िर
उम्मीदों की रविशों से गुज़र गये
तुमने मुहब्बत के सुनहरे तार से
कितनी ज़िन्दगियों के लिबादों पर
प्रेम के फूल काढ़े

कितनी आँखों में तुमने

नर्म, महीन और रेशमी ख़्वाहिशों के धागों से
क़ौल ओ-क़सम के निशान
और उम्मीदों के नशेमन बनाये
आओ
मुझसे कह डालो
इससे पहले कि वक़्त का कारवाँ
और आख़री रेंगता हुआ लम्हा
मेरी ज़िन्दगी के सहरा को छू ले
क्या तुम मेरी मंजिल की तरफ़ जा रही हो
मेरी कींश्ते आरज़ू को रौंदते हुए
अपने बदन के बेदाग़ मोतियों को बिखेरते हुए
अपने मवलूस से आज़ाद करते हुए
इधर आओ
तुम पत्थर नहीं हो, ख़्वाब नहीं हो
तो क्या तुम एक माहिये-ख़ुश-रंग हो
जो मेरे प्रेमजाल में
हमेशा के लिए आ गयी हो
तुम एक हसीन हादिसे की जान हो
जो मेरी हज़ारों रगों से
एक आँख बन कर जाग रही हो
मैं कि जिसे
हादिसिये ज़िन्दगी ने
रीज़ों में बाँट दिया था
एक अजनबी लम्हें में
तुमने उनको एक जाँ कर दिया
और मेरी ज़िन्दगी पर
सुकून की शबनम बरसायी

जब मेरी दो आँखों ने

तुमको परखा
अपने एहसास की अनगिनत उँगलियों से छुआ
तो तुमने
मेरी कोताहियें दामन में
सोने के ख़ज़ाने लुटा दिये
अब मेरी आरज़ुओं के सफ़ीने
इश्क़ के समुन्दरों में
रवाँ-दवाँ हैं
इश्क़ अगर जीवन की मिठास है
तो आशिक़ एक फूल है
मैं वो फूल हूँ
जिसे तुम्हारी अंगुश्ते हिनाबस्ता ने खिलाया है
तुम्हारी बाँहें
खेतों पर रक़्स करती हुई चाँदनी की मानिंद
मुलायम हैं
मुझ पर उन बाँहों में क्या गुज़री
तो सुनो
जैसे अव्वल-अव्वल
लपकती हुई अग्नि ने
ऋषियों को गीत दिये थे
मैं एक किरन की तलाश में
एक नग़में की लकीर पीटता हुआ
तुम तक पहुँचा हूँ
सदियों की शुआओं में
नहाता हुआ
लम्हाते अस्ल में
गाता हुआ
मैं अपने आप तक पहुँचा हूँ ।

धुँधलके साये

यह रात क्यूँ आती है
कौन इसे आने देता है
कौन साँझ के साँवले चेहरे पर
नक़ाबे-शब चढ़ाता है
मैं हर रात की आवाज़ें-पा
से डरता हूँ
जिसके बाल डरावने
और सूरत भयानक है
रात में तारे भी
दाँतों की मानिन्द नज़र आते हैं
उफ़ यह रात
अमावस का अँधेरा मुहीत है
डरावने ख़्वाबों की तारीकी
मैदानों में तसव्वुर के भयानक साये
और ख़यालात के कीड़े-मकोड़े हैं
ज़ुल्मत के लिहाफ़ में
अपने चेहरे को छुपा लेता हूँ
ख़ुदतन्क़ीदी के ख़ंजर को
अपने सीने में उतार लेता हूँ
ख़ून के फ़व्वारे रह-रह कर फूट पड़ते हैं
आने वाली कल के किनारों पर
बदनुमा दाग़ बन जाते हैं

माज़ी का पंजर

याद के झरोकों से झाँकता है
और वक़्त के सुकून को लूटता है
फ़ज़ा को आलूदा करता है
अम्न
तख़्लीखी ज़हन के लिए
नफ़से हयात से कम नहीं
जो उरियाँ हक़ीक़तों के परबतों पर
ज़ाहिर है
और परबतों के दामन में
ज़िन्दगी का कफ़-आलूदा समन्दर
हरदम चीख़ता रहता है
हड्डियों तक में मुत्तहर्रिक-तजुरबात
जज़्ब हो जाते हैं
और वक़्त का भूखा भेड़िया
हक़ीक़त के ज़ख्मी बदन से ख़ून चाट-चाट कर
भाग जाता है
और ज़हन
मुर्ग़ी की तरह
बेज़ये-आफ़ाक़ पर बैठ कर
नापसन्दीदा ख़ियालात की आने वाली
एक नस्ल को सेंकता है

ऐ मीनारए-नूर
ऐ जानेसदाक़त

तुमने जिन्दगी को मुत्तर्लिक कर दिया

उम्मीदों को क्यूँ कजलाएँ
पीछे सरकती हुई और जलती हुई
उम्मीदों पर, इस दर्दनाक धुँधलके पर
चिलमनें छोड़ने के लिए
आखिर तुम क्यों नहीं आयीं ?

शबनम के मोती

किसी तसव्वुर की आहट से लब वा हो जाते हैं
दो बोल
दो पंख बन कर
नील गगन में मेरे वज़ूद को ले उड़ते हैं
एक पंख गीत बन जाता है
और दूजा नामाबर कबूतर
वो लम्हए-सुकून
जो बर्गे-गुल की नींद के घूँघट में
पोशीदा है
किस तरह उरूसे दिल बनेगा
फूलों के नगरों में
ज़रींशए-ज़ीस्त की राहों पर
रंगीन खयालात की कलियाँ चुनी हैं
अब वो काले-काले वज़ूद के बादलों पर
सज जाएँ तो क्या ये
धनक बन कर खिल जाएँगी
मख़मूर-ओ-मस्तूर लम्हों की चिलमनों से
जो मेरी जामिन दौड़ती हैं
वो कैसी नज़रें हैं
माहियें-बेआब

कब से ये खोज, ये प्यास चली आ रही है
तुलू-ओ-ग़ुरूब के सूरज से परे

नाउम्मीदी को बेसहारा में रखती हुई
उन सब्ज़ खेतों में जहाँ चाँदनी लोटती है
जहाँ बादलों के घोल के घोल
शफ़्फ़ाफ़ आसमान की क्यारियों में
चरते रहते हैं

मण्डप पर
बारिश के मासूम क़तरे
दरीचों की दरारों में
सर्द हवा बोलती है
बदन में चुभती है
ज़हन
गोया काग़ज़ की नाव है
तन्हा-तन्हा बहने लगता है
रात की परछाइयों में
सावन की रिमझिम में
आओ, जाने-बहार
एक मुक़द्दस-लम्हा बन जाओ
चाँदनी की किरनों से बुना हुआ लिबादा
तारों के हीरों से बुने गये हार
तेरे मुन्तज़िर हैं
इतर-ए-सुख़न से मैंने
अपने दिल की गुलाबी भर ली है
तेरी राहों में
हर पल
ख़यालात के मुनक़्क़श क़ालीन बिछे हैं

आहिस्ता चल, आहिस्ता
हुजूमे-गुल

शाख़ों की बाँहों में मस्त ख़्वाब हैं
साँस मुअत्तर है
ख़ामोशी ख़ुमार बन गयी है
जीवन-आकाश चाँदनी उगल रहा है
दिल
दिवाली के अनार की तरह
नूर के फूल उछाल रहा है
क्यों तुम मेरे ख़्वाबों को
अश्कों में नहलाती हो ?
ये दिन
सूखे पत्तों की तरह टपक जाने से पहले
आ जाओ !
ये चन्द लम्हे ग़नीमत हैं
आ जाओ !
कि मैं तुम्हारी गुलबदनी को
अपनी साँसों में झुला सकूँ

आज शफ़क़ का आँचल
ख़ूने दिल की झील में भीगा पड़ा है
ग़मो-मसर्रत के सय्याले-आतिशी से
जामे-हयात को पुर करना होगा
रंज-ओ-शादमानी के मख़मली पैराहन
ज़ेबे-तन किये
दुःख-भरे अफ़सानों की सुनहरी दस्तार
ज़ेबे-फ़र्क़ किये
अब भी
वक़्त की देहलीज पर ऊँघती हुई आँखें
मुन्तज़िर हैं

जब नैनों के कमल तुम पर खिले
तो नींद भँवरा बन कर उड़ गयी
आसाब की तनाबें बज उठीं
और दिल ताल पर धड़कने लगा
बदन में मौजे खूँ बल खाती नागिन की तरह
रक्साँ-रक्साँ है
किसी वीरान मंदिर में
उम्मीद की आरती जलती है
दौड़ती छाती, बसीत तारीकी के
उन आखरी लम्हों में
जीवन-ज्योति
मुश्ते अहसास में
आवाज़ें पा की सहर तक
जलना चाहती है

यह रात

[२१ दिसम्बर १९७१ को नागार्जुन सागर में लिखी गयी।]

यह कौन यादों के पत्थरों को कुरेद रहा है
सितारे नुकीले नाख़ूनों की तरह
ख़ून-आलूदा ज़िन्दगी का जश्न मना रहे हैं
कैसे भूल जाऊँ
कि आज तजुरबात का तज्ज़िया हो रहा है

मैं क्या जानूँ यह कैसे पैग़ामात हैं
बादेसबा क्यूँ नग़मारेज़ है
यह किस गुलशन के
किस जन्नत के नग़मे गा रही है
या फिर मेरे ज़हन-ओ-फ़िक्र को
लोरी दे रही है
दरहक़ीक़त यह एक लम्हएबहार को
जगा रही है
जिसे मैं खो चुका था
कब और कहाँ कुछ याद नहीं
यह ख़ुशबुए बदन जो इस रात की लहरों में
निखर रही है, बस रही है
इसने कितने रंगीन और दिलकश दुखों को
अपने सीने से लगा रखा है
जैसे एक नन्हा नश्तर
जो वजूद की गहराइयों में उतरता जाता है

बरसों पहले एक श
भूल के समन्दर में ग़र्क़ हो गयी थी

आरज़ू के पंख
फड़फड़ा रहे हैं
दिल के खँडहरों में
खोयी हुई चाँदनी पुकार रही है
हवस के होंठ
चाँदनी के प्याले की सिम्त
बढ़ रहे हैं
हंगामेशब ख़ामोशी की मकड़ी
नाउम्मीदी के जाले बुन रही है
बस एक आँसू
गोशए-चश्म में लरज़ाँ
यह ग़म का सफ़ीर
तन्हा-तन्हा
शाने क़ुसरवाना से ख़िरामा है
रंगीन याद मुंज्जमिद हो गयी है
माज़ी के जाने का मातम नहीं
मगर यह ज़ख़्म
यह कसक
यह खून कैसा ?

सैकड़ों नखतें
हज़ारों सरगोशियाँ
लाखों रंगीनियाँ
यह इन्द्रजाल कैसा मुहीत है

एक मार्ज़ी
आँखों में
गुरूब और तुलू होते हुए सूरज की तरह
घिर चुका है
दूर कोई तराना उभरता है और डूब जाता है
मेरे तहतुत्शऊर को जगाता है
हज़ारों नर्म उँगलियों से
हर बुनेमू को छूता है, बहलाता है
मुहब्बत के कुंज में
चमेली के फूलों को चुनने के लिए
फ़िक्र निकल चुकी है
कब ? नहीं मालूम ।
एहसास
रोज़-ओ-शब की आग़ोश में
और यादों के गर्म लावे में
तैर रहा है
हादिसात, वक़्त
और फ़ासले के किनारों से
लम्हा-लम्हा दूर होते जा रहे हैं
चढ़ता सूरज
गुरूब होते हुए सूरज से ज़्यादा रौशन है
शफ़क़ का पैरहन
दूर-दूर तक
दिशाओं में लहराता है
शुनीदा नग़मों से ज़्यादा
वो लहरें ग़मअंगेज़ हैं
जो दिल में उतर जाती हैं
ग़म के अफ़साने नीशेज़न हैं

दिलों के दाग़ ऊँची आवाज़ में बोलते हैं
हादिसे की याद गहरी हो जाती है

आँखों के ताल
जिनमें नीले साये मुतहर्रिक़ हैं, बोल रहे हैं
जिन्हें मेरे हज़ारों कान सुन रहे हैं
यह रात नहीं, एक लम्हा है
जिसमें अनगिनत जवाहरात की फ़स्ल
काटी गयी है
मस्सर्रत, जैसे हाथी-दाँत के फूल
उम्मीदें, जैसे नीलम
नाउम्मीदी, जैसे सियाह मोती
जश्न, तखरीब, अंगारे
चरके खाये हुए बदन
फूल और याद
एक दूसरे से गले मिलते हैं
फिर इस लम्हाए बेशक़ीमत से
जीवन के लहू से
ज़िन्दगी का दूध निचोड़ते हैं

आज दिल बेक़ाबू है
ख़ुद को इस रात के हवाले कर दो
धीरे-धीरे
अपनी रूह के सरगम को
नग़मारेज़ करो
यह मुक़द्दस लम्हा है
अर्क़ेगुलाब से धोया हुआ है
और रात
मरतूब है
नग़मा-बलब है

वक्त

ख़ारज़ारों में
वक़्त
फूल की तरह मुसकुराता है
हम अपनी सदी के ख़्वाब हैं
चलो अपने अहद के ख़ुश्क-गुलू को
उस लम्हए-ग़नीमत के ठंडे पानी से तर कर लें
वो लम्हा जिसने मुझे ज़िन्दगी की मसर्रत दी
वो लम्हा जो मैंने तुमको सौंपा
वो लम्हा जो तुमने मुझे दिया
वो लम्हा कोई बर्गे-आवारा तो नहीं
कि हवा से उड़ जाए
लेकिन वो दामाने-ख़याले यार है
जो पंख की तरह लहराता है
जो कमल की झील के सीने से गुज़रता है
और मैं वादियों में, बाग़ों में
उस साये का ताक़्क़ुब करता हूँ
और छू लेता हूँ

मेरी आँखों में झाँको
उस शै को तलाश करो
जो वहाँ है
ख़ून के दरियाओं से परे
ग़ुरूबे-आफ़ताब के सिन्दूर की हद से दूर

काली-काली रातों से आगे
जो चाँदनी बरसाती हैं
देखो,
मैंने इस पाकीज़ा लम्हे को
ख़ून-रिसते हुए मौसमों से छीना है
जो अब तक भी ख़ून-आलूदा है
मैंने गुरूबे-आफ़ताब के ज़ख़्मी सीने से
ये चीख़ छीन ली है
हक़ माँगा है
एक नफ़स
जो सरसब्ज़-चरागाहों में तुम पर और मुझ पर
मुसकुराता रहा है
जो दुःख और मसर्रत
नफ़रत ओ' मुहब्बत से बालातर है
अगर यह लम्हा इधर नहीं उतरता
तो बहारें नाबीना रह जातीं
और आँखें ज़ख़्मी हो जातीं
इसमें सूद-ओ-जियाँ की क्या बात है
आकाश का दिल बेचैन है
सीनों में तूफ़ाने हवादिस हैं
दरिया की आँखें भी ख़ुश्क हैं
माज़ी के
सोने-चाँदी के औराक़
जीवन की आँधी में
चमके, तड़पे
जैसे नन्हें पंख शाहीन के पंजे में

माज़ी क्या कहता है
वीरानी क्यूँ रोती है

कुछ तो कहो
क्यूँ इनसान का ज़हन
ज़िन्दगी से डर रहा है
क्या कोई तेग़ चमका रहा है
या कोई हिरनी
सग-गज़ीदा है

यह तोहफ़ए रोज़ोशब
और यह लम्हा
बतने-सदफ़ में महफ़ूज़ है

हज़ारों मुसलसिल हिलाल देखे हैं
उन आँखों की गहराइयों में
जिनमें कमल खिलते हैं
मेरी निगाहों में निशिस्ते-ख्वाब के लिए
सुनहरा तख़्त कब से जलवा-फ़िगन है
इस दोरंगी दुनिया में
सपने फिर सपने हैं
चलो !
इन्हीं को अज़ीम और मसर्रत-आमेज़ बनाएँ
नीम-वा आँखें हैं
तबस्सुम ज़ियापाश है
वक़्त अगर दस्तक दे
तो अपनी आँखों के घूँघट खोलो

ज़हन शिद्दते ग़म और अफ़सूर्दगी
से आशना है
जैसे क़ैदी क़फ़स से मानूस हो
बादलों से सर-सरो तूफ़ान

और अँधेरों से ज़िन्दगी क्यूँ खेलती है
एक बार नज़र तो उठाओ
सवेरे की सुर्ख़ किरन फूट रही है
उम्मीद की यही किरन
हाथों में कुंकुम भर देगी

ऐ तिश्नगीए ज़ीस्त, लौट आ
तेरे हलक़ को अर्क़ेमुहब्बत से तर करूँगा
काश इस लम्हएमुहब्बत को
हम क़तरा-क़तरा पी जाएँ
फिर अमृत का एक क़तरा
जीवन के जहरे हलाहल में मिलाएँ
और अँधेरे की नक़ाब को चाक करें
फिर सुनहरी सुबह के पानी से
हम रात के चेहरे को धो डालें
और कुछ दिन जी लें
मुझे गुमान तक न था
कि ज़िन्दगी ऐसी भी होती है
इस लम्हएनूर से पहले
मुझे नहीं मालूम था
कि किसी वजूद से मेरी आँखें मुनव्वर हो जाएँगी
मुझे एहसास तक न था
कि रात का परदा उठ जाएगा
और सहर का तूफ़ान बढ़ते-बढ़ते
अँधेरे के शानों तक पहुँच जाएगा
मुझे उम्मीद न थी
कि रूहे कुसरवाना के साये

मेरी खामोश आँखों की झीलों में

बहने लगेंगे
रातें पहले भी थीं
लेकिन
उनमें कोई आहट
कोई सरगोशी नहीं थी

मौसम की आवाज़

गुलज़ारों और रविशों के
आशिक़े आवारा की तरह
कोयल फिर आयी है
तेरी कूक
थके माँदे मुसाफ़िर के लिए
एक तसल्ली है
दुल्हन की तरह जंगल सजे हैं
फूलों के गुलदस्ते, जवाहर के खोशे
आकाश की नीली जिल्द पर
सोज़े-दुरू की पीठ सहला रहे हैं
लहसनियों की, पीले-पीले पुखराजों की
बारिश है, ऊदे हरे कोहसारों के
पिघले हुए रुख़सारों पर
मेरा कहीं बसेरा नहीं है
पौदा कहाँ उगाऊँ
कलियों को कैसे चुनूँ
दिल, रूह की मिट्टी में फूल खिलाने
को मुज़तरिब है
निगाहों की रंग-बिरंगी तितलियाँ
काग़ज़ के उड़ते हुए पुर्ज़े हैं
या फिर गुज़रे हुए कल के
मुबहम-मुबहम ख़्वाब हैं
जिनको वक़्त की नसीमे-सहरी के

झोंकों ने उड़ा लिया है
शायद यह वक़्त के पंजों से कभी न छूट सकें
ऐ ख्वाब के मतवाले
ऐ खाबीदा बज़ूद
हयात-ए-मुक़म्मिल एक खोज है
तुम्हारे इन्तज़ार में, आँखें
कई बहारों के गीत गा चुकी होंगी
और आधा जीवन बीत चुका होगा
कभी-कभी यह मुक़द्दर
काँटों पर भी तुलता है
लेकिन हालात होंठों पर
तवस्सुम पहनते हैं
और शहद की निगाहों से छूते हैं
तुम क्यों इस तरफ़ निगाह करती हो
नन्हे परिंदों के नाज़ुक दिल
शाखों के झरोकों में
जीवन की परछाइयों का रक्स देख कर
काँप रहे हैं

तुम अपनी मुसकुराहट के क़ौसों को
सिर्फ़ फूलों के होंठों पर रखो
तुम हर शव चाँदनी के चिकसे से नहा कर
महताब वन जाती हो
और रात ख़ुशी से काँपने लगती है
क्या कोई बरगे गुल से हीरे का जिगर
काट सकता है ?
क्या कोई आह को बहार की ज़ुल्फ़
समझ सकता है ?

ज़मर्रुद के परिन्दे बन कर
कौनसे ख्वाब उड़ सकते हैं ?
शाखसारों में हम चलते रहते हैं
दूर, दूर, हमराह
आकाश का दिल जब सुर्ख़ हो जाता है
और सूरज
ज़ख्म की अंगुश्तरी में नग की तरह
चुभ जाता है
दुनिया की आँखों में जो ख्वाब बसा है
वह आशियानों पर सलीब की मानिन्द
अगर मुक़द्दर तुमसे पूछे
इस मौसम में, इस रुत में
तुम्हारी आरज़ू क्या है
तुम यह कहोगे
सबके लिए एक मुश्ते-बहार अता कर
और मेरे लिए
वो मुहब्बत-भरी आँखों के प्याले छोड़ दे

गुम्बदें

[ताजमहल से मुतास्सिर हो कर—फ़रवरी १९७२]

अज़ीम ख़्वाबों के नाज़ुक पंख
इनसानियत की चश्मे उफ़क़ पर
लहराते हैं
अँधेरे की हथेलियों से
आँखें मलती हुई
आने वाली सदियाँ
हंगामे सहर जागती हैं
मैं ख़्वाब में
सदियों के कलसों को
उम्मीदों की गुम्बदों को
अपनी निगाहों से छूता हूँ
गूँजें
ख़्वाबों के क़दमों में
आ रहती हैं
ख़ामोशी, नग़मों की आहों में
सो जाती है
इन बुर्ज़ों को, इन गुम्बदों को
हिक़ारत से न देखो
यह वह इमारतें हैं
जो सदियों की कंगनों के काँच से
बनायी गयी हैं
रुख़सारों को सूरज की शुआओं ने

गुलाबी बना दिया है
जिन पर अभी
इनसानियत के बोसों के निशान
चमक रहे हैं
यह चाँदनी रातों में क़ातिल बन जाते हैं
और आशिक़ों के दिल धड़कने लगते हैं
यह कौन अश्कों की ज़ंजीरें फेंकता है
बेकसी के सीने में एक ताज़ा ज़ख़्म
और अपाहिज प्यार पर एक ताज़ा वार
जवाँ मर्दों को सधा कर रोना सिखाते हो
और रोशन झीलों को क्यों ख़ून से भर देते हो ?
यह चम्कीली, सब्ज़, बादामी, कासनी, नीली और काली आँखें
जैसे दमकते जवाहर हैं
जिनकी पलकों से अभी तक दूध की ख़ुशबू आती है
जहाँ उम्मीद, शबनमें मासूमियत पर पलती है
अगर जीती-जागती सब्र की तनावें टूट जाएँ
अगर मख़तूल उम्मीदें जाग पड़ें
तो इनसानी कर्ब
ज़िन्दा सूरज की आँखों को फोड़ देगा
जो इनसान की आँखों में
झूठ की बर्छियाँ चुभोती हैं
रोशनी राख बन जाएगी
और गर्द का ढेर बन कर गिर जाएगी
समन्दर उड़ जाएँगे
ख़्वाब के पंख धीरे-धीरे हिलते हैं
और गुम्बदों को छूते हैं

इन्तजारे शब

यह भीगी-भीगी पूनम की शब
उरियाँ है
बादेसबा के बोसे ले कर
ख़ुशबू को
अपने कोमल होंठों पर मल कर
मेरे कानों में सरगोशी करती है
मैं चश्म बराह
तेरी आमद-आमद की
क़तरा-क़तरा मय पीता हूँ
जब दिल को सुकूँ का नशा-सा
होने लगता है
अपनी आँखों के दरीचे
कर लेता हूँ बन्द
कहीं यह ख़्वाब के पंछी
उनसे निकल कर
उड़ जाएँ तो क्या हो
जैसे कमल
अपने सीने में
शहद छुपा लेता है

मेरे हाथ
एहसास की हद से निकल कर
चन्दा की आवारा किरन को

पा लेने की कोशिश करते हैं
जो, गुलशन के कुंज में जा कर
ऐसी फँसी है
जिसको तेरा आँचल जान के
मैंने
पकड़ने की कोशिश की है
मेरी नज़रें थक-थक कर
तेरे नक़्शेक़दम को
ढूँढ रही हैं
चाँद
बराबर राहों पर, कोहसारों पर
एक नूर उड़ाता रहता है
लेकिन मेरी नज़रें
ज़ुल्मत के रीशों में, जालों में
हर लम्हा उलझती रहती हैं
यह लम्बी जटाओं वाले दरख़्त
नज़रों को आगे बढ़ने से
क्यों रोके हुए हैं
डरता हूँ मैं
यह चाँदनी सारी
ख़्वाबों के ताने-बाने में खो जाएगी
फिर तेरे आ जाने तक
बाक़ी क्या रह जाएगा
एक जीवन जिसमें ख़्वाब नहीं
एक झील नहीं जिसमें पानी
एक मानव, जिसने
क़ौसेक़ज़ा की पहनी हो दस्तार
इक महताबी मलमल का कुरता

जो न बना सकता हो
उड़ते हुए बादल को पकड़ कर
बनफ़शई पापोश बनाना चाहे
बस समझो, वह आखिर में
इक ऐसा तनहा मुसाफ़िर है
इक ऐसा आबलापा है
जो खारआलूदा धरती पर चलता है
या ऐसी आँखें
जिनसे ख्वाब उड़ जाते हैं
वह खाली नशेमन है
जिनसे परिन्दे उड़ गये हों
या ऐसी सहर
जो खला की आँखों में
रक़्सकुना कौकब के झुरमुट पर
झाँकते सूरज का आँचल फैला दे

घरोंदा

मेरे महबूब
तुमने आख़िर
बोसीदा कुटिया में
सूरज की किरनों को
चौखट की पेशानी से बाँध दिया है
बन्द दरवाज़ों से भी गुज़ार कर
तुम आसमान का एक टुकड़ा
अन्दर ले ही आये
ज़र्द पुखराज जैसा जरींशा छिड़का
और सब्ज़ चरागाहों को उसअत दी
मेरे जज़्बात की तपिशअंगेज़ धरती पर
मेरे तसव्वुरात के खेत बहार के गीत गाने लगे
ज़िन्दगी की रविशों को गुलेवजूद की
पत्तियों ने चूमा
चमन के चमन जाग पड़े
एक नये और जवान मौसम का सामना हुआ
मौसम भी ऐसा
कि कभी देखा न सुना
तुम्हारे क़दम जब मेरे बोसीदा घर की तरफ़ बढ़े
मैंने ख़ामोशी का जाम पीते हुए
अपने आपको अँधेरे के चीथड़ों में छिपा लिया
तुम वादे की अज़मत बतौरे तोहफ़ा
उम्मीदों की राख के लिए लाये थे

मेरे खयालात की तितलियाँ नाच उठीं
सूरज की चढ़ती किरनों में
ख्वाहिशों के फूलों पर
तितलियाँ सज गयीं
मैं अपनी ख्वाहिशों को उन सरगोशियों
के साथ करता हूँ
जो कल और आज के फूलों से और काँटों से
हमआहंग हैं
खूनआलूदा ज़ख्मों के मुँह बन्द करता हूँ
और नग़मों को बिखेरता हूँ
जब भी फलक पर जामुनी बादल घिर आये
तुमने बैरक़ों से क़ौसेक़ज़ा सजा दी
तुमने मुझे मीठे लम्हों के सुन्हरी फूल दिये
जो ख़ालिस सोने और सूरज से बने हुए थे
और ज़िन्दगी के लिबादे महरूमी के ताने-बाने
से बुने हुए थे
लेकिन आज उम्मीद ने उनको रफ़ू कर दिया

तुमने नारंगी शाम से मेरा परिचय करवाया
मैंने देखा
उसकी पेशानी पर रात की गहरी लकीरें थीं
ज़िन्दगी के नाक़ाबिले बरदाश्त दुःख के मज़े चखे
बड़े सौंधे थे
एक साँस में उम्मीद थी दूसरी में दुःख था
बिलकुल उसी तरह
जैसे दिन के बाद रात आती है
बेशक
दिल की वादी में जहाँ दुःख बसते हैं

वही तो जगह है
जहाँ सुख़न की आँखें खुलती हैं
आँसुओं के महीन नक़ाब
आहोबुका के आबशार
सब मिल कर एक संगीन हाथ को बुलाते हैं
हुरूफ़ बढ़ते हैं
और उम्मीद फिर से जाग पड़ती है
ज़िन्दगी तुझसे कहती है
कि जब तक अंगूर निचोड़े न जाएँ
शराब नहीं बनती
जब तक गन्ने को शिकन्जे में न कसा जाए
रस नहीं निकलता
गोया जब तक
ज़िन्दगी की कड़वी शराब न चख ले
इनसान बेशऊर रहता है
तुमने मुझसे मुहब्बत का एक जाम माँगा था
जिसमें मेरे तजुर्बात और हवादिस की बर्फ़ पड़ी हो

तोहफ़ए शब

तुमने
अपनी बेख़ाब सियाह ख़लाओं में
दयारे अन्जुम की मुसकानें
और आफ़ाक़ी तसवीरें
सजा ली हैं
मेरी बेकैफ़ तनहाई में
सहराओं, रेगज़ारों की धूल
और आँसुओं के चमकते हीरे भर दिये हैं
सबा, तुम्हारे अतराफ़ मचलती है
उरुसेनौ की ख़ुशबू
मौसमे जवानी की तरह निखरती है
आग मेरी उन उँगलियों को ख़ाकिस्तर
कर रही है
जो कासावकफ़ हैं
वह कासा
जिसमें सियाह मंज़र का दर्द
और चकनाचूर दिल था
वक़्त का पंछी हवाओं में दायम उड़ रहा है
आदम के पाँव में ज़ंजीर पड़ी है
ग़मे जिन्दगी का बोझ
आरज़ू की धनक के पर्दे में
ख़न्दाज़न है
कौन है

जो इस हमारंगी जाल से बच सकता है
कोई तो बताए कि हम
किस राह पर, क्यूँ और कब चल पड़े हैं
यह राज़ शायद मावराएनज़र है

आधी रात गये सन्नाटों के मैख़ाने से
सबा की मुअत्तर ज़ुल्फ़ लहराने लगी
पूरब की सुनहरी नक़ाबों के पीछे
ऊँघने वाले तायर
उषा की गर्म लाली में जाग पड़े हैं
उम्मीद का सूरज सामने है
मसर्रत की झील छलक रही है
ठण्डा इत्रबीज़ आबेरवाँ मुन्तज़र है
चलो चलें
उन किनारों तक
जहाँ
तकमीले ख़्वाहिश के कमल
ख़र्शीदे उगल रहे हैं

सौगात

[अपनी पत्नी की सालगिरह पर—१७ अगस्त '७२]

यह वही दिन है
जो सराबों की आँखों को छू कर
नीले जज़ीरों से होता हुआ
धूप और चाँदनी को पीता हुआ
आया है
मेरे ज़हन की वादियों को
साँस लेते ज़मर्रुदों की मानिन्द
सरसब्ज़ रहना है
जहाँ परी चेहरे रक़्स करें
यही तो वह दिन है
उफ़क़ेचश्म पर
महताब से बातें करता
सूरज से सरगोशी करता है
और मुसकुराहट बन कर
तुम्हारी माँ के होंठों पर
मुहब्बत के सागर उँड़ेलने लगा है
जिसका अक्स सुख़न के औराक़ पर
शाहनामा बन कर चमकेगा।

रक्से बहार

रुत पलट आयी है
ऐ फूलों के हमराज़
जाग
माहोल के शीरीं लब
तुझसे हमक़लाम हैं
ऐ इश्क़ के दरिया
ओ प्रेम-नयन
बोलते परबतों जागती वादियों में
मोर-पंख जैसे पहाड़ों में
नवरंग बहारों का रक़्स रचा है
तबस्सुम के रेशम से दिल के ज़ख़्म रफ़ू होते हैं
टूटे सपनों के हार पिरोये जा रहे हैं
बहने वाले अश्कों को पलकों पर ठहरा लो
यह जीवन के सच्चे मोती हैं

चलो चलें
यह एक महका हुआ बहका हुआ झोंका है
और इस लम्हएअज़ीम ने हमको
मरकज़ेनिगाह बना दिया है
चलो माज़ी के बरगे-चकीदा को भुला दें

यह महास्वप्न और सरगोशियों की रुत
तबस्सुम हर सिम्त बिखरा हुआ है

ज़िन्दगी खींची हुई कमान की तरह चौकस है
लपकते-दौड़ते आबशार
कोहसारों की गोद में छलकते हैं
यही दिल के जज़बात-ओ-अहसासात
और यही अपनी मुहब्बत की निशानियाँ हैं

चलो चलें
उस जीवन मेले की ओर
फिर झूलें उम्मीदों के झूले में
उषा के गुलाबों में
मग़रिब की सुर्खियों में
बुलबुल के मचलते हुए नग़मों में
यह आलम
एक रंगीन नशेमन है
दो तन्हा-तन्हा वजूदों के लिए

यह चाँद
सितारों के आईनों के झुरमुट में है
फिर भी तन्हा-ब-तक़दीर
अकेला मुसाफ़िर
रेगिस्ताने अफ़लाक पर
मंज़िल का मुत्लाशी
अगर तुम वहाँ न होते
दरख़्तों की शाख़ों में सबा का गुज़र न होता
परिंदों के सीनों में कोई गीत न होता
वादियों में फूलों के आँचल न होतें
बाग़ में ख़ुशबू की आहट न होती
और सारी राहें बुझ जातीं
अगर तुम्हारी उँगलियों का सहारा मिल जाए

तो ज़ख़्म तक मुसकुरा पड़ेंगे
मन की कोयल गाएगी
रुत निखर जाएगी

आबेरवाँ में
हम फूलों की दो कश्तियाँ हैं
शाख़ों पर दो चकोर हैं
मँडवे चढ़ती दो बेले हैं
जीवन एक परबत है
बहार ख़ल्ब-ओ-दमाग़ में जलवागर है
चलो
यह लम्हए शीरीं एक नियामत है
दूसरा लम्हा शायद कड़वा कसाला हो
यह दुनिया पैबन्दों का मलबूस है
जीवन आखिर जीवन है
और तुम
अपने 'शेष' के लिए
सब कुछ हो, सब कुछ हो

तूफ़ान

कितने चीख़ते तूफ़ानों
कितने ख़ामोश साहिलों
कितने दहकते सूरजों को छू कर
सहर इनसानियत के दिल से तुलू हो रही है
दूर, जंगलों से महकती साँसें
सबा के दोश पर आयी हैं
वो हुस्न, वो चाल, वो क़दो-खाल
वो अदा, वो बाँकपन
जिनसे हम आशना नहीं
सहर की मद-भरी आँखों का पयाम
नयी आवाज़ में पुकारता है
एक मौज़े ख़्वाब
शबाब आशना थी
अहदे नौ के किनारों पर घिसती है जबीन
इनसान
इस ख़ूनेसहर मे नहा कर और निखर जाता है
और ज़हनों की तक़सीम करने वाले आहनी पर्दों को
चीरता है
वो हज़ारों कुचली हुई आहों के ख़मीर से
तलवार बनाता है

और अपनी म्यान को कुन्दन की मानिन्द चमकाता है
इनसानियत का सूरज
ज़हन के ऐवानों में मोहल्लक़ है
गोया शोलों का खोशा

बर्ग़े खुश्क की मानिन्द
बोलियाँ उड़ रही हैं
मुल्कों की सरहदें थर्रा रही हैं
तूफ़ानी हवाओं में इनसानियत की आँखें
नये हादिसों की मय पीने को खुली हुई हैं।

इनसान

दुःख का सूरज ढ़लता है
और दूसरा उभरता है
बेचैनी के शोलों को भड़काता है
सहर चेहरे बदल-बदल कर लौटती है
ज़िन्दगी के शजर जो कल तक शबनम बरसाते थे
आज उनके फूल शोले और तलवार बन गये हैं
कोहसारों में
नदियों के भँवर की आवाज़ें भी मुंजमिद हो गयी हैं
ज़िन्दा और मुर्दा मछलियाँ
बेहिस ख्वाबों की मौज़ों में बहती रहती हैं
रात जो कल तक चीख़ रही थी
कोहरे के बने हुए महीन पर्दों के पीछे
और यासमीन की साँसों पर
लेकिन आज
चाँदनी की शुआओं पर सवार हो कर
भूख के वसी खेतों पर से गुज़रती है
ग़ैब का हाथ
जिसने फ़ितरत के चेहरे पर बहारों के नुक़ूश बनायें
अब तलवारों के गीत दहाने ज़ख्म में भर रहा है
मैख़ानए गेती में हूराने ज़ुल्मत
और मुक़द्दर की परियों के संग
बैठता हूँ

और तन्हाइयों की ख़ामोश नदियों में बहता रहता हूँ
याद के दरीचों में जब झाँकता हूँ
बीते ज़ख्मी दिन शहंशाह की मानिन्द सजे-सजाये
जिन्हें लहू-लहान ताजपोशी अता होती है
क्यों हर दर्द मेरे सीने में पनाह तलाश करता है
राहगुज़रे हयात पर
ग़मोमसर्रत में कोई फ़र्क़ नहीं
जिसने मौत से समझौता कर लिया हो
वह किसी इफ़रीत से क्यों डरे ?
उसके लिए यह सब कुछ एक खेल है
ज्यों-ज्यों ज़िन्दगी के नुक़ूशेपा पर चलता हूँ
मैं खुद को वक़्त की मज़बूत गिरिफ़्त में पाबाज़ंजीर पाता हूँ
तबाही आँखों देखी तारीख के औराक में दर आती है
जहाँ इनसान, इनसानियत का ख़ून करता है
ज़हर रगों में दौड़ रहा है
मैं यह बोझ शानों पर सहार कर
जब चट्टान पर चढ़ता हूँ
तो यह वज़्म क़दमों की रुकावट बन जाता है
और मंज़िल पर पहुँच कर आसमान की तरफ़ देखता हूँ
उस-सितारए-सुबह की जानिब
जो अभी तक नहीं उभरा है

नस्लें

आज का अहद
नयी नस्ल की
अजनबी ख़्वाहिशात को जगाता है
अहसास
तजुर्बात-ओ-हवादिस की नयी आगोश में
जाग पड़ता है
हर सिम्त अनजानी आवाज़ें
हर जगह जश्न के एहतेमाम
तजुर्बात के ज़ानों पर
कई आरज़ुएँ मेहवेख़्वाब हैं
नयी नस्लें तख़लीक़ की अबदी मौजें हैं
जो ज़िन्दगी की वादियों से गुज़रती हैं
अपनी बेनाम मंजिल की जानिब
आज चाँदनी की किरन
जम्हाई और अँगड़ाई ले कर
जंगल की तन्हाई में अपने तन-मन को
पेड़ों से मलती है
रात मेहताबी किरनों के मरकब पर सवार
दूर निकल जाती है

सहर का कमल खिल उठता है
टूटी-फूटी झोपड़ियों पर
खेतों पर, बस्तियों पर

जब तूफ़ानी हवाएँ
टूटती हैं
और बादलों के जिगर को चीरती हैं
बारूद की मरी हुई ख़ाक
चीख़ का शोला बन जाती है
धरती के अफ़सुर्दा मैदानों में
जहाँ ज़ख्मी इनसानी आज़ा
परोबाल की तरह बिखरे पड़े हैं
जैसे ज़िन्दा दरख़्त की बेज़बान डालियाँ **और पत्ते**
नयी नस्ल के लिए
हमने क्या सरमाया छोड़ा है
बजुज़ अश्क-ओ ख़ून-ओ-जंग
बजुज़ ग़म-ओ-ज़ख़्म-ओ-उसरत
बजुज़ ख़्वाब-दर-ख़्वाब-दर ख़्वाब
रियाकारी-ओ-बुज़दिली
नयी नस्ल
जो अहदे कोहन का सहारा होती है
माज़ी के ख़ुश्क होंठों तक
सूरज के दरियाओं को खींच लाएगी

नींद की वादियों में

ज़हन के दरीचों को बन्द करके
चाँद को बुझा कर
सितारों-भरे पर्दे छोड़ कर
मैं लेट गया हूँ
कुछ देर तो सो लूँ
जैसे कहानियाँ अपने दिल का बोझ हल्का करके
सो जाती हैं
समन्दर की तूफ़ानी मौजों ने
पंखे का काम किया है
आबे-सियाह की चादर के उस किनारे
जो झुटपुटे की ख़ूनी शराब पी रही थी
वहाँ यादें अपने ज़ख्मों को चाट रही थीं
ऐ साग़रे ग़म इधर देख !
मैं तुझ पर जान छिड़कता हूँ
मैं ग़मों से भरपूर रातों पर जान देता हूँ
जो जहादे ज़िन्दगी में शिकिस्त-ख़ुर्दा हों
मैं तेरे आबेसियाह के साये में
पनाह लेने के लिए आया हूँ
इस पानी में निस्फ़-शब का अक्स
और हज़ारों सितारों का ख़ून शामिल है

मेरी तन्हाई के आईने खाने में
कितने अक्स तुमने छोड़े हैं

कितनी रौशनियों के रक्स तुमने फेंके हैं
मेरी उम्मीदों की उम्र को
चाँदी की ज़िया बख़्शी
मीठे लम्हों को तन्हाई की नियामत अता की
और ग़मो-मसर्रत के गुलदस्ते
मेरे दिल को सरफ़राज़ किये
और यह सब कुछ मेरे एक दिल के लिए था
सिर्फ़ एक दिल के लिए

तुमने उफ़क़ पर नीलमों के फूल खिलाये
उम्मीद के याकूत खोद कर निकाले
ग़मो तसकीन के सब्ज़ मरहम
आसमानों से निचोड़े
जो कई धनकों के दामन में लरज़ाँ हैं
वो आज के दिन पर मुसकुराते हैं
लेकिन तुम मुझसे आज
सच - सच कहो,
किसकी आँखों से हज़ारों रोशनियाँ फूट रही हैं
बताओ, तुम कौन हो ?

परछाइयाँ

[नीलगिरी में लिखी गयी ।]

ये ख़यालात क्यों दस्तक देते हैं
हाँ, ये हसीन ख़यालात मेरे ग़रीब घर के सन्नाटों में
क्यों दर आते हैं
मैं इन महवशों की, इन मेहमानों की
क्या ख़ातिर कर सकता हूँ
ये अपनी चाँदनी की मेहताबी दुनियाओं को छोड़ कर
इस घर में आये हैं
मेरा घर दरीचों की आँखों से महरूम है
ये चेहरे हैं
या आफ़ताब की गुलाबी किरनों के हुजूम
उतर रहे हैं
इस ख़ानएवीरान में
जहाँ हादिसात टूटी हुई कुर्सियों की मानिन्द
बिखरे पड़े हैं
वो आते हैं सरगोशियाँ करते हुए
तूफ़ानों की सूरत
आवारा हवाओं की तरह
दूर वादियों और कोहसारों के दामनों में
ख़िजाँदीदा और बर्ग़चकीदा को रौंदते हुए
इस ख़ाली मकान में क्यों आते हैं ?
जहाँ ख़्वाब कोहना-ओ-बोसीदा तसवीरों की मानिन्द
दीवारों पर टँगे हैं
क्यों आ रहे हैं ये

परिन्दों और भँवरों की तरह
कमल के लबों को चूमते हुए
नन्हीं हरयाली के सरों पर झूमते हुए
क्यों इस खँडहर में आते हैं
जिसकी छत को तेज़ हवाओं के ग़ुस्से ने
पहले ही से उड़ा दिया है
मैं इनको क्या दे सकता हूँ
बजुज़ सदाए-दिल
एक लख़्ते ज़िगर
जो पलकों पर लरज रहा हो
यह तनहाई एक नशेमन है
धूप, बारिश और हवाओं का घर है
क्यों आते हो ?
तुमने क्यों मेरा इन्तखाब किया है ?
मैं तो ख़ानए-वीरान में फ़रोकश हूँ
मैं दूर की दुनियाओं का एक ख़ानाबदोश हूँ
चले जाओ, उड़ जाओ सफ़ेद बादल बन कर
नीले आसमानों में थिरकते रहो
जाओ, जा कर बादबान बन जाओ
और सफ़ीनों के संग
बहरे आफ़ाक़ के सीनों पर बहते रहो
जाओ, धुंध, हवा बन कर अनजाने साहिलों की तरफ़
जाओ, चले जाओ, सहर बन कर
कल के गुलाबों में

लेखक के अन्य प्रकाशन

• **सोहराब** : प्रकाशन—१९५१। फ़िरदौसी के शाहनामा की प्रसिद्ध कथा, सोहराब व रुस्तम के मैथ्यू अर्नाल्ड के अंग्रेज़ी काव्य पर आधारित अनुवाद—शास्त्रीय छंद में लम्बी कविता। सुप्रसिद्ध तेलुगू साहित्यकार वेंकट पार्वतीश्वर कवुरु की भूमिका।

• **ऋतुघोष** : प्रकाशन—१९६३। लम्बी कविता। भूमिका लेखक : भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त तेलुगू के सुप्रसिद्ध साहित्यकार लेखक, कविसम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण। अंग्रेज़ी अनुवाद : इन्दिरादेवी धनराजगीर।

• **पक्षुलु** : प्रकाशन–१९६९। १९५१-१९५८ की अवधि में गद्य-पद्य में रचित लघु कविताओं का संकलन।

• **शेष-ज्योत्सना** : गद्य कविताओं का संकलन। प्रकाशन – १९७२। उर्दू अनुवाद : डा. ग़यास सिद्दीकी और अंग्रेज़ी अनुवाद इन्दिरादेवी धनराजगीर ने किया है। उर्दू अनुवाद को नागरी लिपि में भी लिप्यांतरित किया गया है। भूमिकाएँ तेलुगू के महाकवि श्री श्री, उर्दू के सुप्रसिद्ध आलोचक श्री अख्तर हसन और हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् डा. भालचन्द्र राव तैलंग की हैं।

• **बोदिलेयर का तेलुगू अनुवाद** : प्रकाशन—१९७३।

आलोचना-साहित्य

• **शोड़शी** : प्रकाशन—१९६५। वाल्मीकि के महाकाव्य का पुनर्मूल्यांकन। सदियों से अछूते प्रश्नों पर अभिनव प्रकाश डाला गया है। भूमिका तेलुगू, परशियन और संस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री गुण्डेराव हरकारे ने लिखी है।

• **स्वर्ण हंस :** भट्ट हर्ष के नैषध चरित की टीका।

निबन्ध

• **नरुडु नक्षत्रालु (मानव और नक्षत्र) :** प्रकाशन—१९६३। १४ निबन्धों का संग्रह।

• **साहित्य कौमुदी :** प्रकाशन—१९६८। साहित्यिक लेखों का संकलन। लेखों में तेलुगू भाषा के साहित्यिक, शास्त्रीय पक्षों पर अभिनव प्रकाश डाला गया है और तेलुगू साहित्यालोचन को नया मोड़ दिया गया है।

• **ऊहलो :** प्रकाशन—१९६९। (मानव और नक्षत्र के क्रम में) निबन्ध संग्रह।

नाटक

• **मब्बल्लु दरबारु (बादलों में दरबार) :** प्रकाशन—१९६८। द्वितीय संस्करण प्रकाशित।

कथा-साहित्य

• **विह्वला :** प्रकाशन—१९६८। लघु कथाओं का संग्रह। द्वितीय संस्करण प्रकाशित।

हास्य-व्यंग्य

• **चम्पू विनोदिनी :** प्रकाशन—१९६८। हास्य-व्यंग्य की कविताओं का संग्रह।

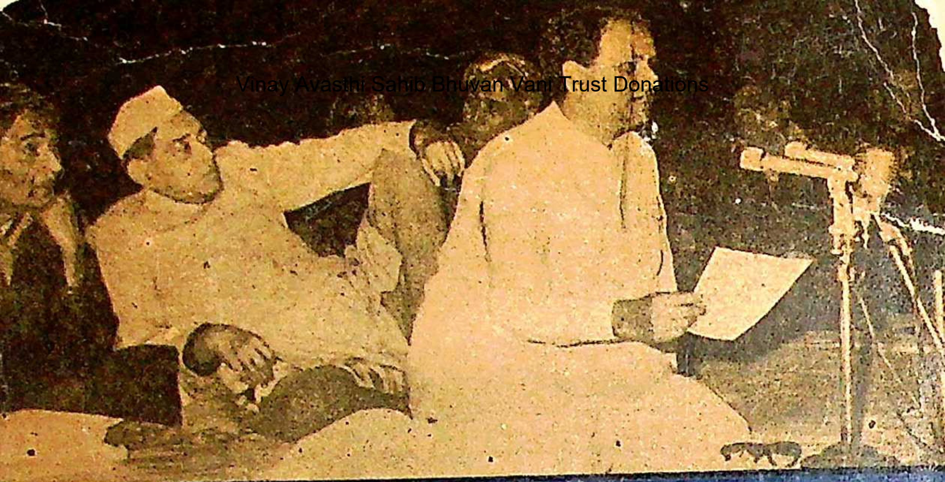
अंग्रेजी पुस्तकें

• **मेघदूत :** महाकवि कालिदास के संस्कृत क्लासिक 'मेघदूत' का इन्दिरादेवी धनराज गीर के सहयोग से अंग्रेज़ी अनुवाद।

• **रिलेशनशिप आफ़ मेघदूत टु दि एपिक रामायण :** इन्दिरादेवी धनराजगीर के सहयोग से अनुवादित। दि इन्डो लॉजिकल युनिवर्सिटी, गोटिंगन, पश्चिम जर्मनी (१९७०) में इसे पढ़ा गया।

अन्य

• **विश्व विवेचन :** सृष्टि के प्रारंभ से मानव तक अहम्-चेतना के परिणाम की वैज्ञानिक गाथा।



एक बच्चा जो शायराना मिजाज ले कर पैदा होता है, अपने माहोल की हर शैं से मुतासिर होता है। शेपेन्द्र शर्मा ने शायराना मज़ाकतों से ज्यादा पहाड़ियों, वादियों, गुनगुनाती नदियों और तलातुम-खेज समन्दरों से हयाते इनसानी का तक़ब्बुल किया है। एक पाबाजंजीर शहीद की मानिन्द खुद को ग़ज़बनाक मौजों के हवाले किया Epics की चांदनी और इनसानी अमवाज के कफ़अलूदा समन्दरों से हर नस्ल की लहरें इकट्ठी करता और रेत पर मुन्तशर सीप, परागन्दा-औराक़, काफ़ूरी सन्दूक और तहज़ीव की आखरी जलती हुई शमओं से मौजुआत का इन्तेखाव करता है। उनकी शायरी में बच्चों की कराहें भी शामिल हैं जो तारीकी से उभर रही हैं। वो हवाओं से मुतहर्रिक पत्तों में सबा के खमेगेसू तलाश करता है और सरू की सरसराहट में उनके नज़रियात की सरगोशी उभरती और बिलआखर नज़्म बन जाती है। इनके नज़दीक तारीकी खुदकुशी है क्योंकि इनसान अपने ख्वाबों की दुनिया से बरसरे पैकार रहता है।

"शेषन्द्र शर्मा की शायरी में वसअते खयाल नियायत अफ़ोंआला है। आज बमुशकिल दस ऐसे शायर होंगे जो उनके मक़ाम तक पहुँच सकते हैं।"

—महाकवि विश्वनाथ सत्यनारायण